वार्षिक रु. १६०, मूल्य रु. १७

ISSN 2582-0656

विवेक ज्योति

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६१ अंक २ फरवरी २०२३

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६१

अंक २

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

प्रबन्ध सम्पादक

स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक

स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक

स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक

स्वामी पद्माक्षानन्द

फाल्गुन, सम्वत् २०७९

फरवरी, २०२३

अनुक्रमणिका

* त्याग और प्रत्यक्षानुभूति का समय आ चुका है : विवेकानन्द १२६
* देवों के देव : महादेव शिव (लक्ष्मीनारायण दोदका) १२९
* संत सखूबाई (स्वामी राजेश्वरानन्द) १३२
* श्रीरामकृष्ण का आकर्षण (स्वामी अलोकानन्द) १३७
* (बच्चों का आंगन) आत्मशक्ति का बोध (श्रीमती मिताली सिंह) १४१
* (युवा प्रांगण) परिश्रम और दृढ़ संकल्प : सफलता के सोपान (स्वामी गुणदानन्द) १४३
* श्रीरामकृष्ण का नारियों के प्रति सहृदयता (मीनल जोशी) १५०
* श्रीरामकृष्ण का विनोदप्रियता (डॉ. अवधेश प्रधान) १५६
* आप भला तो जग भला (स्वामी सत्यरूपानन्द) १६१
* (कविता) श्रीरामकृष्ण अवतार हुआ (विश्वास अग्रवाल) १३४
* (कविता) आओ आओ रामकृष्ण प्रभु (ओमप्रकाश वर्मा) १३६

शृंखलाएँ

मंगलाचरण (स्तोत्र) १२५
पुरखों की थाती १२५
सम्पादकीय १२७
सारगाछी की स्मृतियाँ १३५
प्रश्नोपनिषद् १४२
श्रीरामकृष्ण-गीता १४७
आध्यात्मिक जिज्ञासा १४८
रामराज्य का स्वरूप १५३
गीतातत्त्व-चिन्तन १५९
साधुओं के पावन प्रसंग १६२
समाचार और सूचनाएँ १६७

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : **०९८२७१ ९७५३५** (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)

ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,** वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***

आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९ (समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक) रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

ISSN 2582-0656

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति १७/–	१६०/-	८००/-	१६००/-
विदेशों में (हवाई डाक से)	५० यू.एस. डॉलर	२५० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिये	२००/–	१०००/–	

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : रायपुर (छत्तीसगढ़)
अकाउण्ट नम्बर : 1 3 8 5 1 1 6 1 2 4
IFSC : CBIN0280804

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

श्रीरामकृष्ण देव के जन्मस्थान कामारपुकुर के मन्दिर और वहाँ पर उनके नित्य पूजित विग्रह को दर्शाया गया है।

विवेक-ज्योति कोष/स्थायी कोष

दान दाता	दान-राशि
श्री मदर इंडिया सिक्युरिटिस प्रा. लि.,मुम्बई	१०,०००/-
श्री रामस्वरूप यादव, कोटा (राजस्थान)	१,१००/-

* कृपया सदस्यता राशि जमा करने के बाद इसकी सूचना हमें तुरन्त **फोन, मोबाईल, एस.एम.एस., व्हाट्सएप, ई-मेल** अथवा **स्कैन द्वारा अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड नं.** के साथ भेजें।
* विवेक-ज्योति पत्रिका के सदस्या किसी भी माह से बन सकते हैं।
* पत्रिका को निरन्तर चालू रखने हेतु अपनी सदस्यता की अवधि पूर्ण होने के पूर्व ही नवीनीकरण करा लें।
* विवेक-ज्योति कार्यालय से प्रतिमाह सभी सदस्यों को एक साथ पत्रिका प्रेषित की जाती है। डाक की अनियमियता के कारण कई बार पत्रिका सदस्यों को नहीं मिलती है, अत: पत्रिका प्राप्त न होने पर अपने समीप के डाक विभाग से सम्पर्क एवं शिकायत करें। इससे कई सदस्यों को पत्रिका मिलने लगी है। पत्रिका न मिलने की शिकायत माह के अंत में ही करें। अंक उपलब्ध होने पर ही पुन: प्रेषित किया जायेगा।
* सदस्यता, एजेन्सी, विज्ञापन एवं अन्य विषयों की जानकारी के लिए 'व्यस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय' को लिखें।

फरवरी माह के जयन्ती और त्यौहार

०५	स्वामी तुरीयानन्द
१२	राष्ट्रीय युवा दिवस
१४	स्वामी विवेकानन्द
२३	स्वामी ब्रह्मानन्द
२५	स्वामी त्रिगुणातीतानन्द
२६	श्री सरस्वती पूजा, गणतन्त्र दिवस
२८	श्री नर्मदा जयन्ती
२,१८	एकादशी

'vivek jyoti hindi monthly magazine' के नाम से

अब विवेक-ज्योति पत्रिका यू-ट्यूब चैनल पर सुनें

विवेक-ज्योति के अंक ऑनलाइन नि:शुल्क पढ़ें : www.rkmraipur.org

क्रमांक	विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना के सहयोग कर्ता	प्राप्त-कर्ता (पुस्तकालय/संस्थान)
६९३.	श्री अनुराग प्रसाद, गाजियाबाद (उ.प्र.)	गर्वमेंट कॉलेज, बागबहरा, जि. महासमुन्द (छ.ग.)
६९४.	" "	स्वामी आत्मानन्द स्कूल, फिंगेश्वर, गरियाबंद (छ.ग.)
६९५.	" "	ठा. दलगंजन सिंह बॉयज हायर सेकण्डरी स्कूल फिंगेश्वर,छ.ग.
६९६.	" "	स्वामी आत्मानन्द स्कूल राजिम, जि. गरियाबंद (छ.ग.)
६९७.	" "	'प्राचार्य' शा.उ.मा. गर्ल्स स्कूल, फिंगेश्वर, गरियाबंद (छ.ग.)
६९८.	" "	शा.उ.मा. शाला, बोरिद, फिंगेश्वर, गरियाबंद (छ.ग.)

विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना

मनुष्य का उत्थान केवल सकारात्मक विचारों के प्रसार से करना होगा। – स्वामी विवेकानन्द

❖ क्या आप स्वामी विवेकानन्द के स्वप्नों के भारत के नव-निर्माण में योगदान करना चाहते हैं?

❖ क्या आप अनुभव करते हैं कि भारत की कालजयी आध्यात्मिक विरासत, नैतिक आदर्श और महान संस्कृति की युवकों को आवश्यकता है?

✓ यदि हाँ, तो आइए! हमारे भारत के नवनिहाल, भारत के गौरव छात्र-छात्राओं के चारित्रिक-निर्माण और प्रबुद्ध नागरिक बनने में सहायक 'विवेक-ज्योति' को प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने में सहयोग कीजिए। आप प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने वाली हमारी इस योजना में सहयोग कर अपने राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं। आपका प्रयास हमारे इस महान योजना में सहायक होगा, हम आपके सहयोग की प्रतीक्षा कर रहे हैं –

✍ १. 'विवेक-ज्योति' को विशेषकर भारत के स्कूल, कॉलेज, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों द्वारा युवकों में प्रचारित करने का लक्ष्य है।

✍ २. एक पुस्तकालय हेतु मात्र १८००/- रुपये सहयोग करें, इस योजना में सहयोग-कर्ता के द्वारा सूचित किए गए सामुदायिक ग्रन्थालय, या अन्य पुस्तकालय में १० वर्षों तक 'विवेक-ज्योति' प्रेषित की जायेगी।

✍ ३. यदि सहयोग-कर्ता पुस्तकालय का नाम चयन नहीं कर सकते हैं, तो हम उनकी ओर से पुस्तकालय का चयन कर देंगे। दाता का नाम पुस्तकालय के साथ 'विवेक-ज्योति' में प्रकाशित किया जाएगा। यह योजना केवल भारतीय पुस्तकालयों के लिये है।

❖ आप अपनी सहयोग-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर या एट पार चेक 'रामकृष्ण मिशन' (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम से बनवाकर पत्र के साथ निम्नलिखित पते पर भेज दें, जिसमें 'विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना' हेतु लिखा हो। आप अपनी सहयोग-राशि निम्नलिखित खाते में सीधे जमा कर सकते हैं। आप इसकी सूचना ई-मेल, फोन और एस. एम.एस. द्वारा अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड एवं फोन नम्बर के साथ भेजें।

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इन्डिया, अकाउन्ट नम्बर : 1385116124, **IFSC CODE :** CBIN0280804

पता **– व्यवस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम,**

रायपुर - 492001 (छत्तीसगढ़), दूरभाष – 09827197535, 0771-2225269, 4036959

ई-मेल : vivekjyotirkmraipur@gmail.com, वेबसाइट : www.rkmraipur.org

विवेक-ज्योति स्थायी कोष

'विवेक-ज्योति' पत्रिका स्वामी विवेकानन्द जी की जन्म-शताब्दी वर्ष के शुभ अवसर पर १९६३ ई. में आरम्भ की गई थी। तबसे यह पत्रिका निरन्तर आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और नैतिक विचारों के प्रचार-प्रसार द्वारा समाज को सदाचार, नैतिक और आध्यात्मिक जीवन यापन में सहायता करती चली आ रही है। यह पत्रिका सदा नियमित और सस्ती प्रकाशित होती रहे, इसके लिये विवेक-ज्योति के स्थायी कोष में उदारतापूर्वक दान देकर सहयोग करें। आप अपनी दान-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर, ऐट पार चेक या सीधे बैंक के खाते में उपरोक्त निर्देशानुसार भेज सकते हैं। प्राप्त दान-राशि (न्यूनतम रु. १०००/-) सधन्यवाद सूचित की जाएगी और दानदाता का नाम भी पत्रिका में प्रकाशित होगा। रामकृष्ण मिशन को प्रदत्त सभी दान आयकर अधिनियम-१९६१, धारा-८०जी के अन्तर्गत आयकर मुक्त है।

सुदर्शन सोलार...
ऊर्जा अपरंपार !

आधुनिक भारत की बिजली की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सौर ऊर्जा उपलब्ध है। प्राकृतिक रुप से उपलब्ध इस स्त्रोत का प्रतिदिन की अपनी आवश्यकताओं के लिये उपयोग करके, अपने बिजली के बिल में भारी पैमाने पर कटौती कर, हम अपने देश को बिजली के निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं।

इस सुन्दर भूमि को सदा हरी-भरी रखने के लिये अपना साथी

भारत का विश्वसनीय सौर ऊर्जा ब्रांड - 'सुदर्शन सौर' !

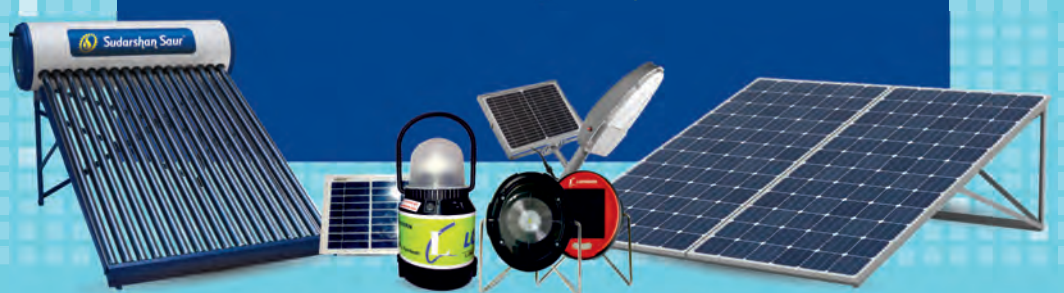

सोलर वॉटर हीटर
24 घंटे गरम पानी के लिए

सोलर लाइटिंग्स
ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू उपयोग के लिए

सोलार इलेक्ट्रिसिटी सिस्टम
रुफटॉप सोलार
बिजली उत्पन्न करने के लिए

घर, बंगलोज, हॉस्पिटल्स, हॉटेल्स, इंडस्ट्रीज, कमर्शिअल कॉम्प्लेक्स, इन्स्टिट्यूट्स के लिए उपयुक्त

समझदारी की सोच!

३० साल का प्रदीर्घ अनुभव!

आजीवन सेवा — लाखों संतुष्ट ग्राहक — विस्तृत डीलर नेटवर्क

Sudarshan Saur®

www.sudarshansaur.com

Toll Free
1800 233 4545

E-mail: office@sudarshansaur.com

।। आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च ।।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६१ फरवरी २०२३ अंक २

श्रीश्रीरामकृष्णो जयति

उद्धर्तुकामं दुरिताब्धिमग्नान्
जनान् कृपावश्यतयावतीर्णम् ।
घोरे कलौ सर्वजनैकसेव्यं
श्रीरामकृष्णं शरणं प्रपद्ये ।।

– पाप रूपी समुद्र में निमग्न लोगों के उद्धार करने के लिये परम करुणावश जो इस धराधाम में अवतीर्ण हुए और जो इस घोर कलिकाल के सभी नर-नारियों के आराध्य हैं, मैं उन्हीं श्रीरामकृष्ण देव की शरण ग्रहण करता हूँ ।

कालात्प्रनष्टं शुभयोगमार्गं
ज्ञानस्य भक्तेश्च कृतेश्च तं तम् ।
वीक्ष्यात्मयत्नेन विशुद्धसर्वं
श्रीरामकृष्णं शरणं प्रपद्ये ।।

– कालचक्र के प्रभाव से ज्ञान एवं योगमार्ग को विनष्ट होते देखकर जिन्होंने अपने प्रयत्न से उन सब मार्गों की पुनः प्रतिष्ठा की, उन्हीं श्रीरामकृष्ण देव की मैं शरण ग्रहण करता हूँ ।

पुरखों की थाती

जानीयात् प्रेषणे भृत्यान् बान्धवान् व्यसनाऽगमे।
मित्रं चाऽपत्ति-कालेषु भार्यां च विभवक्षये।।७८४।।

– किसी महत्त्वपूर्ण कार्य पर भेजकर सेवक की पहचान होती है, कोई व्यसन या लत लग जाने पर सगों की, विपत्ति काल में मित्र की और निर्धन हो जाने पर पत्नी की परीक्षा होती है।

जीवन्तं मृतवन्मन्ये देहिनं धर्म-वर्जितम्।
मृतो धर्मेण संयुक्तो दीर्घजीवी न संशयः।।७८५।।
(चाणक्य)

– जो व्यक्ति अपने धर्म अर्थात् कर्तव्यों का पालन नहीं करता, वह जीवित रहते हुए भी मृतक के समान हैं, दूसरी ओर जो अपने धर्मानुसार आचरण करता है, उसके मरने के बाद भी निःसन्देह, उसकी कीर्ति दीर्घजीवी होती है।

ज्येष्ठत्वं जन्मना नैव गुणैर्ज्येष्ठत्वमुच्यते।
गुणात् गुरुत्वमायाति दुग्धं दधि घृतं क्रमाते।।७८६।।

– किसी उच्च कुल में जन्म लेने मात्र से ही व्यक्ति को बड़प्पन नहीं मिल जाता। बड़प्पन तो उसे अपने गुणों से प्राप्त होता है, वैसे ही जैसे दूध की अपेक्षा दही को और दही की अपेक्षा घी को महत्त्व प्राप्त होता है।

त्याग और प्रत्यक्षानुभूति का समय आ चुका है : विवेकानन्द

हमें चाहिए आध्यात्मिक आदर्श। आध्यात्मिक महापुरुषों के नाम पर हमें सोत्साह एक हो जाना चाहिए। हमारे आदर्श पुरुष आध्यात्मिक होने चाहिए। श्रीरामकृष्ण परमहंस हमें एक ऐसा ही आदर्श पुरुष मिला है। यदि यह जाति उठना चाहती है, तो मैं निश्चयपूर्वक कहूँगा कि इस नाम के चारो ओर उत्साह के साथ एकत्र हो जाना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण परमहंस का प्रचार हम, तुम या चाहे जो कोई करे, इससे प्रयोजन नहीं। तुम्हारे सामने मैं इस महान आदर्श पुरुष को रखता हूँ और अब इस पर विचार करने का भार तुम पर है। इस महान आदर्श पुरुष को लेकर क्या करोगे, इसका निश्चय तुम्हें अपनी जाति, अपने राष्ट्र के कल्याण के लिए अभी कर डालना चाहिए।

एक बात हमें याद रखना चाहिए कि तुम लोगों ने जितने महापुरुष देखे हैं और मैं स्पष्ट रूप से कहूँगा कि जितने भी महापुरुषों के जीवन-चरित पढ़े है, उनमें इनका जीवन सबसे पवित्र था और तुम्हारे सामने यह तो स्पष्ट ही है कि आध्यात्मिक शक्ति का ऐसा अद्‌भुत आविर्भाव तुम्हारे देखने की तो बात ही अलग, इसके बारे में तुमने कभी पढ़ा भी न होगा।

तुम्हें और हमें रुचे या न रुचे, इससे प्रभु का कार्य रुक नहीं सकता, अपने कार्य के लिए वे धूलि से भी सैकड़ों और हजारों कर्मी पैदा कर सकते है। उनकी अधीनता में कार्य करना के अवसर मिलना ही हमारे लिए परम सौभाग्य और गौरव की बात है।

मेरे गुरुदेव का मानव जाति के लिए यह सन्देश है कि 'प्रथम स्वयं धार्मिक बनो और सत्य की उपलब्धि करो।' वे चाहते थे कि तुम अपने भ्रातृ-स्वरूप समग्र मानव जाति के कल्याण के लिए सर्वस्व त्याग दो। उनकी ऐसी इच्छा थी कि भ्रातृ-प्रेम के विषय में बातचीत बिल्कुल न करो, वरन् अपने शब्दों को सिद्ध करके दिखाओ। त्याग और प्रत्यक्षानुभूति का समय आ गया है और इनसे ही तुम जगत के सभी धर्मों में सामंजस्य देख पाओगे।

श्रीरामकृष्ण का जीवन एक असाधारण ज्योतिर्मय दीपक है, जिसके प्रकाश में हिन्दू धर्म के विभिन्न अंग एवं आशय समझे जा सकते है। शास्त्रों में निहित सिद्धान्त-रूप ज्ञान के वे प्रत्यक्ष उदाहरण स्वरूप थे। ऋषि और अवतार हमें जो वास्तविक शिक्षा देना चाहते थे, उसे उन्होंने अपने जीवन द्वारा दिखा दिया है। शास्त्र मतवाद मात्र हैं, रामकृष्ण उनकी प्रत्यक्ष अनुभूति। उन्होंने ५० वर्ष में पाँच हजार वर्ष का राष्ट्रीय आध्यात्मिक जीवन जिया और इस तरह वे भविष्य की सन्तानों के लिए अपने आपको एक शिक्षाप्रद उदाहरण बना गये।

यह नव युगधर्म समस्त जगत के लिए विशेषतः भारत के लिए महा कल्याणकारी है और इस युगधर्म के प्रवर्तक श्रीरामकृष्ण पहले के समस्त युगधर्म-प्रवर्तकों के पुनः संशोधित अभिव्यक्ति हैं। हे मानव, इस पर विश्वास करो और इसे हृदय में धारण करो।

मृत व्यक्ति फिर से नहीं जीता। बीती हुई रात फिर से नहीं आती। विगत उच्छ्वास फिर नहीं लौटता। जीव दो बार एक ही देह धारण नहीं करता। हे मानव, मुर्दे की पूजा करने के बदले हम जीवित की पूजा के लिए तुम्हारा आह्वान करते हैं, बीती हुई बातों पर माथापच्ची करने के बदले हम तुम्हें प्रस्तुत प्रयत्न के लिए बुलाते हैं। मिटे हुए मार्ग के खोजने में व्यर्थ शक्ति-क्षय करने के बदले अभी बनाये हुए प्रशस्त और सन्निकट पथ पर चलने के लिए आह्वान करते है। बुद्धिमान, समझ लो ! हम प्रभु के दास हैं, प्रभु के पुत्र हैं, प्रभु की लीला के सहायक हैं, यही विश्वास दृढ़ कर कार्यक्षेत्र में उतर पड़ो।

सम्पादकीय

कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

भगवान श्रीकृष्ण नारद मुनि से कहते हैं –

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद।।

– हे नारद ! मैं न तो वैकुण्ठ में रहता हूँ और न योगियों के हृदय में रहता हूँ। मेरे भक्त जहाँ मेरा गायन करते हैं, मेरा कीर्तन करते हैं, मैं वहीं निवास करता हूँ।

भगवान के गुणों का गायन करना, उनके नाम और लीलाओं का गायन करना कीर्तन की श्रेणी में आता है। कीर्तन शब्द का अर्थ बृहत् हिन्दी कोषकार ने इस प्रकार बताया है – 'कीर्ति-वर्णन, यशोगान, राम, कृष्ण आदि की कथा गाते-बजाते हुये कहना, गाते-बजाते हुये भाषण करना (नगर-कीर्तन), कथन, वर्णन।' भक्ति के सन्दर्भ में कीर्तन का तात्पर्य परमात्मा के विभिन्न अवतारों, रूपों, नामों और उनकी लीलाओं का गायन करने से है।

कीर्तन के सम्बन्ध में भगवान श्रीरामकृष्ण २४ अक्तूबर, १८८२ को बलराम से कहते हैं – ''भगवन्नाम-गुण-कीर्तन का अभ्यास करने से ही भक्ति होती है। (मास्टर से) इसमें लजाना नहीं चाहिये। लज्जा, घृणा और भय इन तीनों के रहते ईश्वर नहीं मिलते।''

भजन-कीर्तन भक्त के मन को ईश्वरोन्मुखी बनाता है। ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने में सहायता करता है। हाथ से ताली बजाकर कीर्तन करने से मन का विक्षेप दूर होता है और भगवान से भावनात्मक सान्निध्य प्राप्त होता है। तुलसीदासजी रचित रामचरितमानस में शिवजी पार्वतीजी से कहते हैं –

रामकथा सुंदर कर तारी।
संसय बिहग उड़ावनहारी।।

'रामकथा हाथ की सुन्दर ताली है, जिससे संशय रूपी पक्षी उड़ जाते हैं।' कीर्तन करने से भक्त की मानसिक शुद्धि के अनुसार उसका इष्ट के भाव-राज्य में प्रवेश होता है। भक्त कीर्तन के दौरान सद्य: ईश्वर सान्निध्य का बोध करता है। कितने लोग कीर्तन गाते-गाते भाव विह्वल हो जाते हैं। कितने लोग कीर्तन सुनकर भाव-विभोर हो जाते हैं। ऐसे बहुत-से भक्तों के दृष्टान्त मिलते हैं। भगवान श्रीरामकृष्ण तो कीर्तन गाते-गाते, सुनते-सुनते भाव-समाधि में चले जाते थे। उनके जीवन में भाव-समाधि के प्रसंग बार-बार मिलते हैं। कभी ब्राह्म-गीत पर, कभी श्रीकृष्ण के भजन पर, कभी राधा के भजन पर, कभी शक्तिरूपिणी माँ दुर्गा और काली के भजनों को गाते-गाते, कीर्तन करते हुये नाचते-नाचते उन्हें समाधि लग जाती थी। कीर्तन के आनन्द में मग्न होते-होते वे समाधि के आनन्द में मग्न हो जाते थे। श्रीरामकृष्ण-वचनामृत के प्रणेता महेन्द्रनाथ गुप्त 'श्रीम' ने कई प्रत्यक्षदर्शी घटनाओं का उल्लेख किया है, जिसमें से कुछ यहाँ उल्लेखनीय हैं –

''सुरेन्द्र के घर के आँगन में श्रीरामकृष्ण सभा को आलोकित कर बैठे हुये हैं। शाम के छ: बजे होंगे। ... आज अन्नपूर्णा देवी की पूजा है। चैत्र शुक्ला अष्टमी, १५ अप्रैल, १८८३, दिन रविवार। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आये हैं। ... अब संकीर्तन होगा। मृदंग बजाया जा रहा है। मृदंग का मधुर वाद्य गौरांगमण्डल और उनके नाम-संकीर्तन की याद दिलाकर मन को उद्दीप्त करता है। श्रीरामकृष्ण भाव में मग्न हो रहे हैं। रह-रहकर मृदंगवादक पर दृष्टि डालकर कह रहे हैं – ''अहा ! मुझे रोमांच हो रहा है !'' गवैया ने पूछा, ''कैसा पद गायें?'' श्रीरामकृष्ण ने विनीत भाव से कहा, ''गौरांग के कीर्तन गाओ।'' कीर्तन आरम्भ हो गया। कीर्तन में गौरांग के रूप का वर्णन हो रहा है – ''सखि, मैंने पूर्णचन्द्र देखा', 'न ह्रास है, न मृगांक', 'हृदय को आलोकित करता है।'' गवैया ने फिर गाया – ''कोटि चन्द्र के अमृत से उसका मुख धुला हुआ है।'' श्रीरामकृष्ण यह सुनते ही सुनते समाधिमग्न हो गये। गाना होता ही रहा। श्रीरामकृष्ण की भाव-समाधि छूटी। वे भावमग्न होकर एकाएक

उठकर खड़े हो गये तथा प्रेमोन्मत्त गोपियों की तरह श्रीकृष्ण के रूप का वर्णन करते हुये कीर्तन-गवैयों के साथ-साथ गाने लगे – ''सखि, रूप का दोष है या मन का?'' ''दूसरों को देखती हुई तीनों लोकों में श्याम ही श्याम देखती हूँ।''

राधाजी पर अन्य कीर्तन हुये। सुरेन्द्र ने श्रीरामकृष्ण से कहा, किन्तु आज मातृ-वन्दना का एक भी गाना नहीं हुआ। बस क्या था, कुछ देर मातृ-चर्चा के बाद ठाकुर स्वयं माँ के नाम लेकर भजन गाने लगे – (भावार्थ)

''ओ आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द करो ना।
उन दोनों चरण बिना मेरा मन अन्य कुछ जाने ना।।
तपन-तनय मुझे मन्द कहे, किस दोष से तो जानू ना।
भवानी कहके भव तर जाऊँगा, मन में थी यह कामना।
बीच सागर में डूबा देगी मुझे, सपने में भी सोचा ना।।
अहर्निशि दुर्गा-दुर्गा कहूँ, तब भी दुखराशि कटी ना।
अब यदि मरूँ, तो ओ हर सुन्दरी, दुर्गानाम कोई लेगा ना।।

उसके बाद दूसरा भजन गाने लगे –

''मेरे मन दुर्गानाम जपो। जो दुर्गानाम जपता हुआ रास्ते में चला जाता है, शुलपाणि शूल लेकर उसकी रक्षा करते हैं। तुम दिवा हो, तुम सन्ध्या हो, तुम्ही रात्रि हो। कभी तो तुम पुरुष का रूप धारण करती हो, कभी कामिनी बन जाती हो। तुम तो कहती हो कि मुझे छोड़ दो, परन्तु मैं तुम्हें कदापि न छोड़ूँगा। मैं तुम्हारे चरणों में नुपूर बनकर बजता रहूँगा। जय माँ, श्रीदुर्गा कहता हुआ ! माँ जब तुम शंकरी होकर आकाश में उड़ती रहोगी, तब मैं मीन बनकर पानी में रहूँगा, तुम अपने नखों पर मुझे उठा लेना। हे ब्रह्ममयी, नखों के आघात से यदि मेरे प्राण निकल जायें, तो कृपा करके अपने अरुण चरणों का स्पर्श मुझे करा देना।'' (वचनामृत १९०)

२७ मई, १८८३ को दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण अपने कक्ष में विराजमान हैं और भक्तों से वार्तालाप कर रहे हैं। दिन के ९ बजे का समय है। भक्तगण धीरे-धीरे आ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर आदि से बात किया। माँ काली का दर्शन-पूजन किया। बहुत समय बाद आसन से उठकर भाव-विभोर होकर नृत्य करने लगे। कह रहे हैं – 'माँ विपद्नाशिनी।'

शनिवार, ६ सितम्बर, १८८४ है। ३ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण अधर के घर में नरेन्द्र, मुखर्जी बन्धुद्वय, भवनाथ, मास्टर, चुनीलाल, हाजरा आदि भक्तों के साथ बैठे हुये हैं। कीर्तन के गीत के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है। नरेन्द्र कह रहे हैं – कीर्तन में ताल-सम आदि कुछ नहीं है, इसलिये इतना लोकप्रिय है और लोग उसे पसन्द करते हैं।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, यह तू क्या कह रहा है? गाना करुणापूर्ण होता है, इसलिये लोग इतना चाहते हैं। इसके बाद नरेन्द्र ने कई गाने गाये – 'हे दीनशरण ! तुम्हारा नाम बड़ा ही मधुर है।' 'क्या मेरे दिन व्यर्थ ही चले जायेंगे?' आदि। वैष्णवचरण ने भी एक-दो गाने गाये। श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'ऐ वीणा ! तू ईश्वर का नाम ले,' यह गाना एक बार गाओ। वैष्णवचरण ने वह गाना गाया। गाना सुनते ही श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। वे उसी आवेश में कहते हैं, 'अहा ! हरे कृष्ण कहो, हरे कृष्ण कहो।' यह कहते हुये श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भक्तगण देख रहे हैं। कीर्तनिया दूसरा गाना गाने लगा – 'श्रीगौरांग सुन्दर नव नटवर तप्तकांचनकाय'। श्रीरामकृष्ण उठकर खड़े हो गये और नृत्य करने लगे और बाँहें फैलाकर स्वयं उसके पद गाने लगे। गाते-गाते भावस्थ हो गये। कीर्तनिया फिर गाने लगा – ''हरिनाम के सिवाय संसार में अन्य कौन-सा धन है? मधाई मधुर स्वर से तू उनके नाम का कीर्तन कर–

''हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।''

कीर्तनीया ने एक और गाना गाया। श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त हो गये, नृत्य कर रहे हैं। वह अपूर्व नृत्य देखकर नरेन्द्र आदि भक्तगण स्थिर न रह सके। सब श्रीरामकृष्ण के साथ नृत्य करने लगे।

नृत्य करते हुये श्रीरामकृष्ण को समाधि हो रही है। उस समय उनकी अन्तर्दशा हो गयी। वाणी बन्द हो गयी। सर्वांग स्थिर हो गया। भक्तगण घेरकर उन्हें नाच रहे हैं, प्रेमोन्मत्त की तरह। (वचनामृत, पृ.५८६)

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्रीरामकृष्ण कीर्तन, भजन सुनते ही उस भाव की इतनी गहराई में चले जाते थे कि उन्हें भावावेश होने लगता था, वे समाधि में चले जाते थे। भावावेश में नृत्य करने लगते थे। नृत्य करते-करते समाधिस्थ हो जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण देव के जीवन की नृत्यावस्था की ये कुछ झलकियाँ हैं, जो भक्त-मन को भाव विभोर कर देती हैं और भजन-कीर्तन की अतल गहराइयों में जाकर अपने इष्ट के सान्निध्य-बोध की प्रेरणा देती हैं। ○○○

देवों के देव : महादेव शिव

लक्ष्मीनारायण दोदका, विशाखापट्टनम्

देव बड़े, दाता बड़े, शंकर बड़े भोरे।
किये दूर दुख सबनिके, जिन्ह-जिन्ह कर जोरे।।

हे ! शंकर आप बड़े देव हैं, बड़े दानी हैं और बड़े ही भोले हैं। जिन-जिन लोगों ने आपके सामने हाथ जोड़े, आपने बिना भेद-भाव के उन सब लोगों के दुख दूर कर दिये। महेश्वर की लीलाएँ अपरम्पार हैं। वे दया करके जिनको अपनी लीलायें और लीलाओं का रहस्य जनाते हैं, वे ही जान सकते हैं। वस्तुत: भगवान शिव हैं बड़े ही आशुतोष। उपासना करने पर शीघ्र ही प्रसन्न होते हैं। जो भक्त सकाम भाव से आपकी पूजा करते हैं, आप उन पर रीझ जाते हैं। भोले भण्डारी हैं, देने में संकोच नहीं करते, इसलिए लोग, आपको भोलेनाथ कहते हैं। आपकी सेवा, स्मरण और पूजन में थोड़े-से बेलपत्र और चावलों से ही काम चल जाता है, परन्तु इनके बदले में आप हाथी, रथ, घोड़े और जगत में जितने सुख के पदार्थ हैं, वे सभी दे डालते हैं।

गोसाई तुलसीदास जी ने विनयपत्रिका में बड़ी सुन्दर कल्पना की है – 'बावरो राबरो नाह भवानी... जगत मात मुसुकानी।' ब्रह्माजी लोगों का भाग्य बदलते-बदलते हैरान होकर पार्वतीजी के पास जाकर कहने लगते हैं कि हे ! भवानी आपके नाथ (शिवजी) पागल हैं। सदा देते ही रहते हैं। जिन लोगों ने कभी किसी को दान नहीं देकर बदले में पाने का कुछ भी अधिकार नहीं प्राप्त किया, ऐसे लोगों को भी वे दे डालते हैं। जिससे वेद की मर्यादा टूटती है। आप बड़ी सयानी हैं, अपने घर की भलाई तो देखिये जिन लोगों के मस्तक पर मैंने सुख का नामो-निशान भी नहीं लिखा था, आपके पति शिवजी के पागलपन के कारण, उन कंगालों के लिये स्वर्ग सजाते-सजाते मेरे नाक में दम आ गया है। लोगों की भाग्यलिपि बनाने का यह अधिकार कृपा कर आप किसी दूसरे को सौंपिये, मैं तो इस अधिकार की अपेक्षा भीख माँगकर खाना अच्छा समझता हूँ। इस प्रकार ब्रह्माजी की प्रेम, प्रशंसा, विनय और व्यंग्य से भरी हुई सुन्दर वाणी सुनकर महादेवजी मन-ही-मन मुदित हुए और जगजननी पार्वती मुस्कराने लगीं।

भगवान शिवशंकर के समान दानी कहीं नहीं है, वे दीन-दयालु हैं, देना ही उनके मन भाता है, माँगनेवाले उन्हें सदा सुहाते हैं। आप दीनों पर दया करनेवाले, भक्तों के कष्ट हरनेवाले और सब प्रकार से समर्थ ईश्वर हैं, समुद्र मन्थन के समय जब कालकूट विष की ज्वाला से सब देवता और राक्षस जल उठे, तब आप अपने दीनों पर दया करने

के प्रण की रक्षा के लिए तुरन्त उस विष को पी गये और नीलकण्ठ कहलाये। जब दारुण दानव त्रिपुरासुर जगत को बहुत दुख देने लगा, तब आप उसको एक ही बाण से मारकर 'त्रिपुरारी' कहलाये।

शिवजी औघड़ दानी हैं, थोड़ी-सी सेवा से ही पिघल जाते हैं। दीनों को हाथ जोड़े खड़ा नहीं देख सकते। उनकी कामना बहुत शीघ्र पूरी कर देते हैं। शंकरजी की सेवा से सुख, सम्पत्ति, सुबुद्धि और उत्तम गति आदि सभी पदार्थ सुलभ हो जाते हैं। जो आतुर जीव उनकी शरण में गये, उन्हें शिवजी ने तुरन्त अपना लिया और पल भर में सबको निहाल कर दिया। गुणनिधि नामक ब्राह्मण ने आपकी कौन-सी भक्ति की थी, जिस पर प्रसन्न होकर आपने उसे अपना कल्याण पद दे दिया।

अंग में लगाते हैं सदा से चिता का भस्म-
फिर भी शिव परम पवित्र कहलाते हैं,
गोद में बिठाये रहते हैं, गिरिजा को सदा-

फिर भी शिव अखण्ड योगिराज कहलाते हैं,
घर नहीं, धन नहीं, अन्न और भूषण नहीं,
फिर भी शिव महादानी कहलाते हैं।
दिखते भयंकर, पर नाम शिवशंकर,
नाश करते हैं, तो भी शिवनाथ कहलाते हैं।।

मस्तक पर द्वितीया का चन्द्रमा, कण्ठ में हलाहल विष, हाथों में कमण्डल, चक्र, त्रिशूल और वक्ष:स्थल पर सर्पराज शेषजी सुशोभित हैं, वे भस्मों से विभूषित, देवताओं में श्रेष्ठ, सर्वेश्वर, संहारकर्ता, सर्वव्यापक, कल्याणरूपक, चन्द्रमा के समान शुभ्र वर्ण श्रीशंकर जी सदा हमारी रक्षा करें।

शिवजी को निम्न २१ नामों से नमस्कार करें : ॐ नम: शिवाय, ॐ रुद्राय नम:, ॐ नीलकण्ठाय नम:, ॐ सोमनाथाय नम:, ॐ कपर्दिने नम:, ॐ वृषभध्वजाय नम:, ॐ सुरेशाय नम:, ॐ सोमेश्वराय नम:, ॐ व्यालप्रियायै नम:, ॐ दिगम्बराय नम:, ॐ उमाकालाय नम:, ॐ ईशाय नम:, ॐ जगत्प्रतिष्ठायै नम:, ॐ अन्धकासुरमर्दिने नम:, ॐ त्रिनेत्राय नम:, ॐ विश्वनाथाय नम:, ॐ श्मशानवासिने नम:, ॐ गौरीपतये नम:, ॐ पशुपतिनाथाय नम:, ॐ लिंगाय नम:, ॐ मृत्युंजयाय नम:।

कर्पूरगौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि।।

भगवान शिव के अवतार : भगवान शिव शंकर के एकादश रुद्रावतार, एकादश पुरुषावतार इस प्रकार हैं –

एकादश रुद्रावतार : प्रथमरुद्र: शम्भु, द्वितीयरुद्र: पिनाकी, तृतीयरुद्र: गिरीश, चतुर्थरुद्र: स्थाणु, पंचमरुद्र: भर्ग, षष्ठरुद्र: सदाशिव, सप्तमरुद्र: शिव, अष्टमरुद्र: हर, नवमरुद्र: शर्व, दशमरुद्र: कपाली और एकादशरुद्र: भव।

एकादश पुरुषावतार : नंदीश्वर, गृहपति, दुर्वासा, पिप्पलाद, यतिनाथ व हंस, कृष्णदर्शन, अवधूतेश्वर, भिक्षु वय, सुरेश्वर, किरात व हनुमान। भगवान शंकर ने अपने गणाध्यक्ष के पद पर नंदीश्वर का अभिषेक किया। नन्दी शिवगणों में सर्वश्रेष्ठ हो गये।

महामृत्युञ्ज उपासना : भगवान शंकर को तीन नेत्रवाला कहा गया है। शिव जीवन देते हैं, अमर कर देते हैं और मृत्यु के देवता भी हैं। अनन्त हैं शिव! कोई दिखावा नहीं है, फिर भी आश्चर्यमय रहस्यों को अपने में समेटे हैं शिव! शिव सदाशिव हैं। हम तीन नेत्रोंवाले ईश्वर की उपासना करते हैं, हम सुगन्धि युक्त और पुष्टि प्रदान करने वाले उर्वारुक की तरह मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाएँ, अमृत से नहीं।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगिन्धं पुष्टिवर्धनं।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।

तीन नेत्रवाले ईश्वर की उपासना का उद्देश्य है – मृत्यु के बन्धन से छुटकारा पा लेना। मृत्यु का अर्थ जीव का नाश हो जाना कदापि नहीं है, बल्कि यह स्वाभाविक क्रिया है। जैसे मनुष्य कपड़ों के फट जाने पर या पुराने हो जाने पर नए वस्त्र धारण कर लेता है, वैसे ही जीव जर्जर शरीर को छोड़कर नया शरीर धारण कर लेता है। यह पार्थिव शरीर तो जीवन का खोल मात्र है। अत: तत्त्व से समझने पर मृत्यु कोई दुख का कारण नहीं है। मृत्यु से शरीर नष्ट होता है तथा अज्ञान से चेतना नष्ट होती है और विवेक अचेतन अवस्था में पड़ा रहता है। जो जीवन के वास्तविक अर्थ को समझते हैं, उन्हें शरीर के वियोग हो जाने का कोई दु:ख नहीं होता।

मुकुन्द मुनि संतान हीन थे। मुनि ने सपत्नीक भगवान शिव की आराधना की। भगवान के प्रसन्न होने पर मुनि ने उनसे पुत्र प्रदान करने की प्रार्थना की। भगवान शिव बोले – तेजस्वी, बुद्धिमान, ज्ञानी व चरित्रवान पुत्र चाहते हो, तो वह मात्र सोलह वर्ष तक जीवित रहेगा तथा अज्ञान और चरित्रहीनवाला पुत्र चाहते हो, तो वह लम्बी आयुवाला होगा। मुनि ने अल्पायु गुणवान पुत्र माँगा। शिव की कृपा से मुनि को गुणवान पुत्र की प्राप्ति हुई। मुनि ने पुत्र का नाम मार्कण्डेय रखा। शनै:-शनै: उसकी शिक्षा, दीक्षा चलती रही। मृत्यु का समय निकट आते रहने पर मुनि चिन्तित रहने लगे। पुत्र ने कारण जानना चाहा, तो पिता ने उन्हें पूर्ण जानकारी दे दी। मार्कण्डेय को अपनी साधना पर विश्वास था। उसने प्रण किया कि मैं भगवान मृत्युञ्जय को प्रसन्न

मार्कण्डेय

करूँगा और पूर्णायु को प्राप्त करूँगा। इस प्रकार बालक मार्कण्डेय विधि-विधान से आशुतोष की उपासना करने लगे। वे लिंग पूजा करके मृत्युञ्जय स्तोत्र का पाठ करते थे। शिव उनकी साधना से प्रसन्न हुए।

सोलहवें वर्ष का अन्तिम दिन आ पहुँचा और काल उनके प्राणों का हरण करने को आ पहुँचा। बालक मार्कण्डेय ने

स्तोत्र को पूर्ण करने का आग्रह किया। किन्तु मृत्यु के भय ने उसे ऐसा करने की अनुमति नहीं दी। जब काल ने मार्कण्डेय के प्राण हरण करने चाहे, तो भक्त-वत्सल भगवान शंकर भक्त को बचाने के लिए प्रकट हो गये। उन्होंने काल को ललकारा। यम भगवान से भयभीत होकर चले गये। स्तोत्र की समाप्ति पर प्रसन्न होकर प्रलयंकर ने उन्हें अमरता का वरदान दिया। अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनुमान, विभिषण, कृपाचार्य, परशुराम और मार्कण्डेय, इन आठ नामों को प्रातः स्मरण करने वाला सौ वर्ष का आयु भोगता है।

शिवरात्रि व्रत – माहात्म्य : फाल्गुन-कृष्ण पक्ष में जिस दिन अर्धरात्रि में चतुर्दशी पड़ती हो, उस दिन शिवरात्रि का व्रत करना चाहिए। यदि इस दिन सोमवार या रविवार पड़े, तो यह महान शुभदायक व्रत कहा गया है। यों तो शिवजी के विविध व्रत हैं, मगर शिवरात्रि व्रत से अधिक हितकर, मोक्ष प्रदान करनेवाला अन्य कोई साधन नहीं है। शिवालय में जाकर विधान से भगवान शिव का पूजन करना चाहिये। इस समय एक माला **'ॐ नमः शिवाय'** इस परम प्रसिद्ध मन्त्र का जप करें। यदि बिना कुछ श्रम के भी यह परम श्रेष्ठ 'शिवरात्रि व्रत' किया गया हो, उससे भी मोक्ष पद की प्राप्ति अवश्य होती है। शिवपुराण में इसके माहात्म्य के सम्बन्ध में एक व्याध की कथा का वर्णन आता है।

परिवार प्रमुख : भगवान शिव : परिवार प्रमुख बनने के लिए भगवान शिव के गुणों का अवलोकन करें और उन्हें अपने जीवन में ढालने की चेष्टा करें, तो एक वरदान की उपलब्धि होगी। मनुष्य के जीवन में तीन वस्तुएँ रोटी, कपड़ा, मकान सर्वाधिक आवश्यक है। भगवान शिव का आहार आक-धतूरा, बिल्व-पत्र, वस्त्र बना बाघम्बर और निवास बनाया श्मशान। शिव ने इन तीनों ही चीजों की समस्त सुविधायें अपने परिवार को सौंप दी।

जिस परिवार में दिन-रात कलह मची हो, वह परिवार नरक बन जाता है। स्वर्ग वहाँ है, जहाँ एकता, प्रेम और शान्ति हो। अब देखो, शिव का वाहन बैल, उमा का वाहन सिंह, शिव का कण्ठहार सर्प, श्रीगणेश का वाहन मूषक और कार्तिकेय का वाहन मयूर। सब आपस में एक-दूसरे के पुश्तैनी दुश्मन हैं। मगर वाह रे शिव का प्रताप, सबको एक ही धागे में बाँध रखा है। परिवार-प्रमुख को परिवार में उत्पन्न विवादों को अपने तक ही सीमित रखना पड़ता है, अगर उगले तो दोनों परिवार का अनिष्ट होगा। जैसे शिव हलाहल विष को अपने कण्ठ में धारण करके (सृष्टि के कल्याण हेतु) नीलकण्ठ हो गये। परिवार-प्रमुख को भी नीलकण्ठ बनना चाहिए। परिवार-प्रमुख को अपना दिमाग, शिव की तरह शीतल रखना चाहिए। महाशिव के मस्तक पर चन्द्रमा और गंगा से शीतलता का संकेत मिलता है। शिव ने अपने विवाह में दहेज न लेकर पर्वतराज की कन्या का वरण किया, बाराती भूत बने। इस प्रकार शिव ने बड़प्पन का परिचय दिया।

शिव तो महादेव हैं। वे गुणों की खान हैं। उनका अनुकरण मनुष्य तो क्या किसी भी लोक का प्राणी नहीं कर सकता। हम शिव की उपासना करते हैं। हमें उनके गुणों से प्रेरणा लेनी चाहिए कि हम सूर्य भले न बन सकें, कम से कम दीपक तो अवश्य बनें, जिससे अपने मन को प्रकाश मिले, दूसरों को प्रकाश मिले और हमारा व्यक्तित्व और चरित्र, हमारा मार्गदर्शन करे, तो हमारी शिव-भक्ति भी सार्थक होगी और हमारा मनुष्य जीवन भी। सत्यम् शिवम् सुन्दरम्।

शिव समान दाता नहीं, बिघ्न निवारणहार।
लज्जा सबकी राखियो, शिव बैलन के असवार।।

○○○

संत सखूबाई

स्वामी राजेश्वरानन्द, 'राजेश रामायणी'

महाराष्ट्र में कृष्णा नदी के तट पर बसे 'कर्हाड़' गाँव के एक ब्राह्मण परिवार की कुलवधू सखूबाई भगवान की परम भक्त थी। परिवार में श्वसुर, सास और पति तीन प्राणी थे। सखू जितनी सरल तथा उदार थी, उतने ही वे तीनों कलह-प्रिय और कृपण थे। रात-दिन सबकी सेवा में संलग्न रहने पर भी सखू को परिवार की ओर से बराबर सताया जाता था, बात-बात में गालियाँ दी जाती थीं और भोजन के लिये रूखी-सूखी रोटी मिलती थी और वह भी पर्याप्त नहीं होती थी; परन्तु सखू ने तो '**जाही बिधि राखे राम ताही बिधि रहिए**' का ऐसा पाठ पढ़ा था कि प्रत्येक कष्ट भगवान का नाम लेकर सह लेती थी।

दो. – सास ससुर पति तीनहुँ, कष्ट निरन्तर देत।
हरि मरजी जिय जानि कै, सखू सबै सह लेत।।

दो. – तन सों गृह कारज करे, मुख में राखे नाम।
रूखी-सूखी जो मिले, पाइ करे विश्राम।।

यदि कभी कोई पूछता, ''बेटी तुम्हें तो ससुराल में बड़ा कष्ट है ! क्या तुम्हारे नैहर में तुम्हारी सुधि लेनेवाला कोई नहीं है? अरे कौन हैं तुम्हारे माता-पिता? पता बताओ, तो हम सूचना भिजवा दें।'' तब सखूबाई आँखों में आँसू भर कर यही उत्तर देतीं –

दो. – नैहर पंढरपुर मेरो, रुकमणि मेरी माय।
पिता पंढरीनाथ हैं, करिहैं अवसि सहाय।।

वे कभी-कभी एकान्त में बैठकर सोचतीं –

क. – नीर भरि नैनन्ह में सोचे सखूबाई सदा,
प्रभु-पद प्रीति जग जीव हितकारी है।
निज दुख उनकी सुनाइबो जरूरी कहा,
जानत हिये की जन स्वामि बनवारी है।।
साधन बिहीन दीन जन सौं सनेह करें,
विट्ठल दरबार की रीति यह न्यारी है।
मन में है लालसा पंढरपुर आइबे की,
अरजी हमारी किन्तु मरजी तुम्हारी है।।

आषाढ़ शुक्ल एकादशी समीप आ गयी थी। कर्हाड़ गाँव से होकर यात्रियों की टोलियाँ भगवान विट्ठलनाथ के दर्शन-लाभ के लिये पंढरपुर जा रही थीं। तभी एक दिन जब सखूबाई कृष्णा नदी पर जल लेने गयी थीं, तो उस दिन उन्होंने भक्तों की टोली का दर्शन किया। उनके मन में आया कि अवसर यही अच्छा है, इन्हीं भक्तों के साथ यात्रा करके मैं भी पंढरपुर पहुँचकर श्रीविट्ठल भगवान का दर्शन करूँ।

क. – जन्म ले अनेक जगती के गीत गाये किन्तु,
रसना से अब तो गोविन्द गुन गाऊँगी।
कृपा करी नाथ हरि भक्तन को साथ मिल्यो,
औसर अमोल नहिं हाथ से गवाऊँगी।।
जगत मनाइये में व्यर्थ ही बिताये दिन,
प्रेमपन्थ राही बनि प्रभु को रिझाऊँगी।
लाख आवें विघ्न किन्तु मानूँगी नहीं मैं आज,
ठान यही ठानी है पंढरपुर जाऊँगी।।

मन में ऐसा निश्यच होते ही सखू ने खाली घड़ा फेंक दिया और परिवारवालों का भय भूलकर भक्तों के साथ हर्षित होते हुए प्रभु के दर्शन के लिये चल पड़ीं।

दो. – भर्‌यो हिये घट प्रेम रस, दियो रिक्त घट डारि।
सखू चलीं प्रभु दरस हित, अति आतंक बिसारि।।

एक पड़ोसिन ने सखू की सास को सूचना दे दी। उस कर्कशा ने अपने पुत्र को तुरन्त ही सखू को पकड़ लाने के लिये भेज दिया। वह सखू को निर्दयतापूर्वक घसीटते हुए घर लाया, निर्ममता से पीटा, फिर एक मजबूत रस्सी से सखूबाई को घर के अन्दर ही बाँध कर डाल दिया और चेतावनी दी कि अब एकादशी तक तू यहीं बँधी रहेगी।

सखू ने उन्हें एक शब्द भी नहीं कहा, पर व्यथित मन से वह अपने प्रभु से कह उठी –

(गीत) **विनती सुनो पंढरीनाथ।**
या अबला की दीन बन्धु जी लाज तुम्हारे हाथ।।
परिवारी प्रतिकूल भये हैं, कालहु को भय भूल गये हैं।
बन्धन में मोहिं बाँध, छुड़ायो हरि भक्तन को साथ।।
विनती ...
कैसे पास तुम्हारे आऊँ, दरसन करि लोचन फल पाऊँ।
कीर्तन करूँ प्रेम से नाचूँ, धरूँ चरन में माथ।।

भक्त की आर्त पुकार सुनकर करुणानिधि प्रभु द्रवित हो गये। तभी सखू ने देखा कि एक सुन्दर महिला पास आकर खड़ी हो गयी।

दो. – चरन वरन वपु नयन कर, पद कटि एक समान।
तुरत सखू की सखी बनि, प्रगटे श्रीभगवान।।

अत्यन्त मधुर वाणी में महिला रूपधारी प्रभु बोले –

(गीत)
निहारो सखू मैं सखी हूँ तुम्हारी।
तुम्हारे ही जैसी है रहनी हमारी।।
मुझे बाँध दो तुम अब अपनी जगह पर।
दरसन को जाओ तजो भीति भारी।
लौटोगी तब तक मैं बँध के रहूँगी,
यही बात है मैंने मन में विचारी।
सकल भाँति घर की सम्हालूँगी सेवा,
भरूँगी मैं पानी करूँगी बुहारी।
मैं बन्धन तुम्हारा अभी खोलती हूँ,
राजेश बोले वचन यों मुरारी।।

सखी रूप धरी प्रभु कह रहे थे, ''सखू ! तू निश्चिन्त होकर पंढरपुर चली जा।'' यह कहकर लीला पुरुषोत्तम ने

सखू के वस्त्र पहने और अपने उसे पहनाए। यह स्वांग पूरा करके बोले, ''सखू ! तू जब तक घर लौटेगी, तब तक मैं यहाँ बँधी रहूँगी।'' तब सखू तो अपनी सहेली के वस्त्र पहनकर चुपके से हरि भक्तों की टोली में जा मिली और कीर्तन करते हुये पंढरपुर के लिये हर्षित होते हुए चल पड़ीं।

दो. – चलीं मगन मन सखू तब, हरि भक्तन के साथ।
यहाँ सखू के ठौर पै, बँधे पंढरीनाथ।।

प्रभु को सखूबाई के स्थान पर बँधे हुए पन्द्रह दिन बीत गये। उसके पति को चिन्ता हुई कि यदि यह अन्न-जल के बिना मर गयी, तो हमें हत्या तो लगेगी ही राज्यदण्ड भी मिल सकता है। उसने पत्नी रूपधारी प्रभु को मुक्त कर दिया। वे भी सखू की भाँति ही घर के कार्य में लग गये, भोजन बनाकर सबको खिलाया। बहू के व्यवहार में नयापन न होते हुये भी उस दिन रसोई में सबको अपूर्व स्वाद का अनुभव हुआ। कुछ ही दिनों में सास, श्वसुर एवं पति अपना दुर्व्यवहार त्याग कर उसके साथ सहृदयतापूर्ण व्यवहार करने लगे।

पंढरपुर पहुँचकर सखूबाई ने निर्जला और निराहार व्रत करते हुए पंढरपुर में शरीर छोड़ने का निश्चय कर लिया।

दो. – पंढरपुर छोड़ूँ नहीं, जब तक तन में स्वास।
हरि भजि के तन को तजू, करि के व्रत उपवास।।

एक दिन सखू की यह इच्छा पूरी भी हो गई।

दो. – मन वाणी पावन किए, गोविन्द के गुन गाय।
देह त्यागि इक दिन मिली, प्रभु प्रियतम से जाय।।
दो. – विप्र एक संयोग वस, तब तहें पहुँच्यो आय।
तेहि ने शव पहचानि के, दई अन्त्येष्टि कराय।।

संयोगवश एक ब्राह्मण ने उसके शव को पहचान कर उसकी अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न करा दी। इधर भगवान सखूबाई का अभिनय कर रहे थे। अत: श्रीरुक्मिणीजी को चिन्ता हुई।

पद – रुक्मिणी सोच रही मन में।
याने देह तजी यहँ वहँ हरि बँधे है बन्धन में।।
भे कृशगात कृपालु श्रीकेशव पूरे पन्द्रह दिन में।
सखू न पहुँचे निज घर कैसे लौटें कृष्ण भवन में।।

अत: श्रीरुक्मिणीजी ने सखू की अस्थियाँ समेटकर उसमें पुन: प्राण संचार कर उसे नया शरीर प्रदान किया।

अस्थि समेट किये स्थापित, पुनः प्राण तन में।

और समझाते हुए कहा –

घर जाओ प्रभु बँधे हैं अब तक, तुमको दिये वचन में।।
मम हित लागि कष्ट प्रभु पावत, पड़े जो वाक्य श्रवन में।
भयो सखू को हीय दुखी अरु, नीर भरे नैनन में।।

श्रीविट्ठल भगवान की कृपा का अनुभव करके वह गद्‌गद हो रो उठी। उनके पैर मानो पंख हो गये थे, शीघ्र ही वह अपनी ससुराल कर्हाड़ जा पहुँची। लीलाधारी भगवान

भी उसी समय पानी का घड़ा लेकर कृष्णानदी के तट पर आये थे, वहीं भक्त और भगवान का अपूर्व मिलन हुआ।

दोहा – ससुरारी पहुँची सखू, नूतन पाइ सरीर।
घट लै करुणामय मिले, तब कृष्णा के तीर।।
भर्‌यो नीर ते घट दियो, सखूबाई के हाथ।
सहजहिं अन्तर्धान भये, तब पंडरीनाथ।।

सखूबाई ने मानो पाकर भी सब खो दिया हो, लुटी-लुटी सी वह घड़ा लेकर घर पहुँची और अपने काम-काज में लग गयी। सास-ससुर एवं पति के व्यवहार में अप्रत्याशित परिवर्तन देखकर उनने समझ लिया कि यह उन्हीं आर्तिहर

प्रभु की ही कृपा है।

कुछ समय बीतने पर किवल गाँव का वह ब्राह्मण, जिसने पंढरपुर में सखू की अन्त्येष्टि-क्रिया करवायी थी, कर्हाड़ गाँव में आया, तो उसने सोचा सखू के सास, ससुर और पति को सखू के देह-त्याग का समाचार देता चलूँ, पर उसने सखू के घर जाकर देखा कि सखूबाई तो सास-ससुर की सेवा में लगी हुयी थीं। अब तो ब्राह्मण देवता बड़े आश्चर्य में पड़े।

दोहा – अचरज में भरि विप्र तब, मन सोचें धरि मौन।
देह तजी यदि सखू ने तो फिर है यह कौन।।

उसने सखू के सास-श्वसुर को पंढरपुर में घटित पूरी घटना सुनायी और कहा मैंने तो वहाँ इसका मृतक कर्म कराया था। सास बोली कि हमने तो सखू को बाँध कर रखा था, वह भला पंढरपुर कैसे जा सकती थी; पर ब्राह्मण भी कैसे मान लेता। आखिर सखू को बुलाकर पूछा गया, तो सखू बोली –

सवैया. –
बाँध दियो जब आपने तो बनि मेरी सखी भगवान पधारे।
मुक्त कियो मौंहि बन्धन तें बँधि आप गये तहँ बाँसुरी बारे।।
मेरो हि रूप बनाय रहे नट नागर मोहन विट्‌ठल प्यारे।
भक्ति बिना घर बैठे मिले प्रभु सासु जी धन्य हैं भाग्य तुम्हारे।।

यह सुनकर सास-श्वसुर एवं पतिदेव घोर पश्चात्ताप करते हुए कहने लगे, ''हाय ! हम कैसे पापी हैं, जो हमने कृपानाथ को ही रस्सी से बाँधकर रखा।'' वे अत्यन्त दुखी हो सखू के विरोध करने पर भी चरणों में गिर कर क्षमा माँगने लगे। सखूबाई ने अपने सास-ससुर और पति को समझाते हुए कहा कि प्रभु तो अकारण करुणा-वरुणालय हैं, वे हमें अवश्य क्षमा करेंगे। भक्त और भगवान की कृपा से वह पूरा परिवार ही श्रीविट्‌ठलनाथ जी की कृपा का भाजन बन गया।

बोलिए भक्तवत्सल भगवान की जय। ○○○

कविता

रामकृष्ण अवतार हुआ

विश्वास अग्रवाल

प्रफुल्लचित्त हो खुदीराम ने गयाधाम प्रस्थान किया ।
नारायण ने स्वप्न में आकर उनको यह वरदान दिया ।।
कहा प्रभु ने खुदीराम से मैं तेरा सुत बन आऊँगा ।
जग-जन के दुख-कष्ट-ताप को आकर के मिटाऊँगा ।।
ईश्वर स्वयं पधारेंगे, सुनकर खुदीराम प्रसन्न हुये ।
पर दुसरे क्षण सोच-समझ कर वे बहुत ही खिन्न हुये ।।
कहा उन्होंने प्रभु से, क्या मैं सेवा कर पाऊँगा?
आप हैं नारायण, क्या भोग, वस्त्र दे पाऊँगा?
हँस कहा नारायण ने आपका ही अंश बन आऊँगा ।
जैसे तुम रखोगे, मैं उसमें ही तुष्ट हो जाऊँगा ।।
प्रसन्नता से खुदीराम के आँसू आँखों से ढ़लक गये ।
आनन्द से विभोर हो वे अपने घर को निकल गये ।।
कामारपुकुर में माँ चन्द्रा को अद्भुत आभास हुआ ।
सहसा शिव की मूर्ति में अनुपम दिव्य प्रकाश हुआ ।।
खुदीराम के घर आने पर चन्द्रा ने सब बतलाया ।
खुरीराम ने भी चन्द्रा को स्वप्न गया का सुनाया ।।
जो अद्वैत अखण्ड ब्रह्म, वह धरती पर साकार हुआ ।।
फाल्गुन में कामारपुकुर में रामकृष्ण अवतार हुआ ।
त्रेता में जो राम थे, जो द्वापर में श्रीकृष्ण बने ।
जीव-सेवा का पाठ पढ़ाने, वे ही रामकृष्ण बने ।।

सारगाछी की स्मृतियाँ (१२३)

स्वामी सुहितानन्द

(स्वामी सुहितानन्द जी महाराज रामकृष्ण मठ-मिशन के उपाध्यक्ष हैं। महाराजजी जगजननी श्रीमाँ सारदा देवी के शिष्य स्वामी प्रेमेशानन्द जी महाराज के अनन्य निष्ठावान सेवक थे। उन्होंने समय-समय पर महाराजजी के साथ हुए वार्तालापों के कुछ अंश अपनी डायरी में गोपनीय ढंग से लिखकर रखा था, जो साधकों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। 'उद्बोधन' बँगला मासिक पत्रिका में यह मई-२०१२ से अनवरत प्रकाशित हो रहा है। पूज्य उपाध्यक्ष महाराज की अनुमति से इसका अनुवाद रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के स्वामी प्रपत्त्यानन्द और वाराणसी के रामकुमार गौड़ ने किया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' में क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है। – सं.)

०७-०१-१९६५

महाराज – पुरी में चैतन्यदेव ने कैसे कार्य किए थे ! अठारह वर्षों तक उसी जगन्नाथ-विग्रह के सामने खड़े रहे। जगन्नाथजी को तो चैतन्यदेव ने पहचनवाया या परिचित कराया। इसीलिये तो हमलोग महाप्रसाद खाते हैं। मेरी (गर्भधारिणी) माँ तो वृद्धा विधवा ब्राह्मणी थीं। मैंने पुरी में अद्‌भुत घटना देखी। मेरी माँ को निकटवर्ती घर की एक निम्नजातीय महिला ने भोजन दिया। माँ ने सहास्य वदन उसे खा लिया। मैं तो चकित रह गया !

सेवक – दिनभर ठाकुर की बातें पढ़ता हूँ, फिर भी क्यों मन में उनका चिन्तन नहीं रहता?

महाराज – कैसे रहेगा? कहीं कोई कुछ चुरा ले गया है, उसी बात को लेकर तैतीस बार मंथन करोगे और फिर बिना प्रसंग ही अन्य आश्रम के किसी साधु ने कहाँ क्या खाया, क्या किया, यही सब लेकर सोचते रहते हो। यही सब तो नित्यकर्म हो गया है। मन ठाकुर में कैसे रहेगा? मुझे इससे बड़ा कष्ट होता है।

सेवक – अच्छा, अब आगे से इन सबकी चर्चा नहीं करूँगा।

महाराज – अहा ! तब तो जान बच गई। देखो, जिससे अपनी बात पर टिके रहो।

सेवक – प्रयास करूँगा।

१७-०१-१९६५

कल हरि महाराज (स्वामी तुरीयानन्द जी) की जन्मतिथि थी। प्रातः साढ़े आठ बजे पेराम्बूलेटर से भ्रमण करते हुए महाराज की भेंट श्रीश महाराज से हुई। उन्होंने प्रणाम किया।

महाराज – कहो जी, कैसे हो? आज क्या किया?

श्रीश महाराज – महाराज, आज सुबह गीता के द्वितीय अध्याय, उपनिषद और शिवमहिम्न-स्तोत्र का थोड़ा पाठ किया। अभी हरि महाराज के कक्ष से जप करके आ रहा हूँ। किन्तु महाराज, वहाँ बैठकर यही डॉक्टर, दवा आदि के बारे में सोच रहा था। स्वामीजी ने तो कहा है – अभी सब्जी बेचना और उसके बाद ही उठकर ध्यान में बैठ जाना।

महाराज – इसी बात को लेकर ही तो मास्टर महाशय के साथ मतभेद था। मास्टर महाशय कहते हैं – ठाकुर ने कहा है कि पहले हाथ में तेल लगाओ, फिर कटहल काटो, किन्तु ये लोग तो पहले ही कटहल काटने को देते हैं। किन्तु ये लोग समझ गए थे कि हमलोग जप-ध्यान क्या करेंगे ! किसी प्रकार वीर्यधारण करके रहने का अभ्यास और उसी के साथ परोपकार करके थोड़ी भगवान की उपासना, इतनी ही हमारी सामर्थ्य है। इसीलिए वे लोग हम जैसे अनुपयोगी लोगों के अनुकूल ऐसा विधान कर गये हैं।

श्रीश महाराज के चले जाने पर –

महाराज – जब इस तरह की बातें कहना सीख गया है, तो उसका सब हो गया है।

थोड़ी देर बाद बुद्ध महाराज के साथ भेंट हुई, उन्होंने भी कुछ वार्तालाप आदि किया। वे बोले कि अखण्ड गीता-पाठ होगा। हरि महाराज के कक्ष में पारी में जप हो रहा है और अन्त में अद्वैत आश्रम में हवन होगा। किन्तु गीता का सप्तशती होम नहीं होगा। योगी महाराज की इच्छा नहीं है।

महाराज – इस कक्ष में जप, यही हमारे लिए ठीक है। कुछ आत्मनिष्ठ (subjective) चीजें और भक्तों के लिए बाहर के इन सभी आडम्बरों (अनुष्ठानों, कर्मकाण्डों) की आवश्यकता है। होम सन्ध्या के बाद क्यों होगा? सन्ध्या के उपरान्त तो तान्त्रिक क्रियाएँ होती हैं।

माणिक महाराज पास ही थे। प्रसंगक्रम से महापुरुष महाराज की चर्चा उठी। बुद्ध महाराज ने अनेक बातें कहीं – महापुरुष महाराज आम के पेड़ के नीचे बैठते थे, उन्होंने

कहा था – यहाँ निरर्थक रूप से घुमक्कड़ों का अड्डा मत बनाओ इत्यादि।

माणिक महाराज – ''उस समय हमलोग बेलूड़ मठ के 'प्रेमानन्द स्मृतिभवन' में एक साथ ही रह रहे थे। ये (प्रेमेश महाराज) संन्यास के लिए एकदम तैयार हो गए थे, यह बात मैं नहीं जानता था। महापुरुष महाराज का दर्शन करते ही उन्होंने कहा, 'परमहंस के कन्धे को देखकर उन्हें परमहंस कहा जा सकता है' ऐसा कहते हुए उन्होंने एक श्लोक कहा।''

बुद्ध महाराज – कहने के लिए स्मृति में धुंधला या अस्पष्ट रूप से आ रहा है।

बुद्ध महाराज और प्रेमेश महाराज योगियों की तरह भ्रमण कर रहे हैं। रास्ते में चलते समय दायें-बायें नहीं देखते थे।

२०-०१-१९६५

दोपहर में विशुद्धानन्द-स्मृति के प्रसंग में प्रेमेश महाराज और उनके साथ वार्तालाप एवं चर्चा के सम्बन्ध में १९६० में जो कुछ मैंने लिखा था, उसे पाठ करके सुनाया। सुनने के बाद महाराज अतीव आनन्दित हुए। मैंने पूछा, ''कैसा लगा?'' ''सब चला गया'' – कहकर महाराज रोने लगे। उनकी आँखों से निकले आँसू मुख में चले गए। बहुत देर बाद वे अपने को सँभालते हुए बोले, ''बड़ा स्नेह करते थे, बड़ा प्रेम था। पुराने लोग थे ! मानो अभी सुखद स्वप्न देखकर उठा हूँ। अब तो वे सब पुराने लोग हैं नहीं। निर्मल महाराज थोड़ा-थोड़ा और प्रभु महाराज भी कुछ-कुछ प्रेम करते हैं, उन सबसे भी तो सम्पर्क नहीं रख पाता हूँ।''

अपराह्न में श्रीरामकृष्ण-लीलाप्रसंग का पाठ हो रहा है।

महाराज – अहा ! क्या ग्रन्थ है ! क्या लेखन है ! ठीक मानो वकालत करके सिद्धान्त निश्चित करना। ठाकुर और माँ अपने भीतर जिस दूसरे व्यक्ति को देख पाते थे, वह उनका कारण शरीर था। स्वामीजी ने अमेरिका में कई बार वक्तृता देते हुए देखा था, सूक्ष्म शरीर में वह शरीर नहीं रहता है। बीज के समान रहता है। भूत-प्रेत आदि स्थूल शरीर के उपादान में तैयार होते हैं, विविध स्तर-भेद से बनते हैं।

२१-०१-१९६५

परसों शाम को मैंने महाराज से आग्रहपूर्वक पूछा था – ठाकुर के सम्बन्ध में जितने भजन हैं, किसे अच्छा कहा जायेगा?

महाराज – इसे कैसे बता पाऊँगा ! मुझे तो अपनी रचना ही अच्छी लगेगी।

सेवक – क्यों, आप तीसरे व्यक्ति (तटस्थ) होकर बताइए न।

महाराज – इन्द्रदयाल द्वारा लिखे भजन बहुत ही सुन्दर हैं।

सेवक – प्रशंसा करने से आपको अभिमान होता है?

महाराज – लगता है, थोड़ा-थोड़ा होता है। क्या मुझमें बिलकुल अहंकार नहीं है?

रात ९ बजे के बाद बुद्ध महाराज ने प्रणाम करके कहा – सेवाश्रम से सटा जो घर है, उसे जो अधिग्रहण करने की बात थी, वह सफल हो गई है। वे लोग न्यायालय में गए थे। बाद में वे बोले – ठाकुर पीछे हैं।

महाराज – ठाकुर को पीछे रखने से ही कठिनाई होती है। उन्हें (ठाकुर को) सामने रखने से अनुगमन करना होता है। पीछे रखने से अपनी इच्छानुसार कहता हूँ और इच्छानुसार चलने हेतु सहायता चाहता हूँ। अर्थात् वे कान पकड़कर चलाते हैं, कभी अच्छी तरह, कभी खराब तरह से। माँ ने कहा है – हानि होने पर भी बवाल समाप्त करना चाहिए। **(क्रमशः)**

कविता

आओ आओ रामकृष्ण प्रभु

डॉ. ओमप्रकाश वर्मा

आओ आओ रामकृष्ण प्रभु, आओ प्रभु तुम कृपानिधान ।
मेरे उर में सदा बसो प्रभु, कर दो विषय-भोग-अवसान ।।
देवदेव तुम त्रितापहारी, हृदयकमल में विराजमान ।
मायामोहित जगजन को प्रभु, देते तुम ईश्वर का ज्ञान ।।
पूर्णकाम भूताधिवास तुम, सच्चितसुख के हो अभिधान ।
निष्प्रपंच तुम अज-अविनाशी, योगीजन के चिर कल्यान ।।
अखिल विश्व के तुम वैभव प्रभु, त्यागवृत्ति के हो आख्यान ।
तुम ही सर्वचराचर-पालक, प्रणतजनों के तुम हो प्रान ।।
मैं तव चरणों का सेवक प्रभु, चाहूँ तव चरणों में स्थान ।
कृपा करो प्रभु दीन-दयामय, कर दो मम भवरोग-निदान ।।

श्रीरामकृष्ण का आकर्षण

स्वामी अलोकानन्द, रामकृष्ण अद्वैत आश्रम, वाराणसी

अनुवाद – अवधेश प्रधान, वाराणसी

आकर्षण का कोशगत अर्थ है – खींचना, खिंचाव, लगाव, आसक्ति, ममता आदि। 'श्रीरामकृष्ण का आकर्षण' अर्थात् श्रीरामकृष्ण के लिए आकर्षण या खिंचाव। या फिर इसका अर्थ हुआ – श्रीरामकृष्ण स्वयं किसी को करुणावश अपनी ओर खींच रहे हैं या आकर्षित कर रहे हैं। हम इन दोनों अर्थों में श्रीरामकृष्ण के आकर्षण को उनकी भक्तमंडली के जीवन के प्रकाश में देखने का प्रयास करेंगे।

प्रश्न उठता है, इस आकर्षण का कारण क्या है? आकर्षण विभिन्न कारणों से होता है। जैसे – रूप, गुण, गान, नाटक, कीर्तन, व्यवहार आदि के कारण। श्रीरामकृष्ण के भक्तों ने इन सब के लिए उनके प्रति आकर्षण का अनुभव किया था। लेकिन यह दैवी आकर्षण अधिक था, मनुष्य अलौकिक गुणों के आकर्षण की उपेक्षा नहीं कर सकता है। केवल मनुष्य ही नहीं, वहाँ जीव-जन्तु, स्थावर-जंगम समस्त विश्व-प्रकृति चंचल हो उठती है।

श्रीमद्भागवत के 'वेणु गीत' नामक अध्याय में हम देखते हैं कि गोचारण करते हुए भगवान श्रीकृष्ण जब बाँसुरी बजाते हैं, तो घरों में गोपियाँ भगवान की लीला का अनुध्यान करती हैं –

गावश्च कृष्णमुखनिर्गत-वेणुगीत-
पीयूषमुत्तभित-कर्णपुटैः पिबन्त्यः।
शावाः स्नुतस्तनपयः कवलाः स्म तस्थु-
र्गोविन्दमात्मनि दृशाश्रुकलाः स्पृशन्त्यः।। [१]
नद्यस्तदा तदुपधार्य मुकुन्दगीत –
मावर्तलक्षित-मनोभव-भग्नवेगाः।।[२]

अर्थात् गायों ने बाँसुरी की धुन सुनकर कान खड़े कर लिए हैं, दूध पीते हुए बछड़े थनों में मुँह लगाए निःस्पन्द हो गए हैं, नदियाँ बाँसुरी की धुन सुनकर भगवान का दर्शन करने को विह्वल हो उठी हैं, यह उनकी तरंगों की भंगिमा से ही लक्षित होता है, लताएँ रोमांचित हो रही हैं।

फिर देखते हैं कि शरद पूर्णिमा की रात को भगवान की वंशीध्वनि सुनकर गोपियाँ स्थान, काल, पात्र और अपना-अपना कर्त्तव्य-कर्म भूलकर आधी रात में यमुना के किनारे पहुँच जाती हैं। यह साधारण आकर्षण नहीं है, दैवी आकर्षण है। यह अनुपेक्षणीय है – इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

प्रत्येक युग में भगवान इस दैवी आकर्षण के माध्यम से

भक्तों का मेला लगाते हैं। श्रीरामकृष्ण ने स्वयं एक दृष्टान्त के द्वारा इस आकर्षण या खिंचाव की बात कही है – ''चुम्बक पत्थर लोहे से क्या कहता है कि तुम मेरे पास आओ? आओ, ऐसा कहना नहीं पड़ता है, लोहा अपने आप चुम्बक पत्थर के आकर्षण से खिंचा चला आता है।''[३]

''कभी भगवान चुम्बक होते हैं और भक्त सुई; भगवान आकर्षण करके भक्त को खींच लेते हैं और कभी भक्त चुम्बक पत्थर हो जाता है, भगवान सुई हो जाते हैं।''[४]

''शुद्धात्मा कैसा होता है – जैसे चुम्बक पत्थर बहुत दूर है, लेकिन सुई हिल रही है – चुम्बक पत्थर चुपचाप निष्क्रिय पड़ा है।''[५]

''चुम्बक लोहे को जिस तरह खींचता है, उसी तरह हमको खींचना ही होता है।''[६]

चंद्रमणि और पड़ोसियों का श्रीरामकृष्ण के प्रति आकर्षण

स्थान गयाधाम। विष्णुपदी में पितरों के लिए पिण्डदान करके क्षुदिराम गयाधाम में ठहरे हुए थे। एक दिन रात के पिछले पहर में उन्होंने स्वप्न देखा कि भगवान गदाधर कह रहे हैं कि वे उनके पुत्र के रूप में जन्म लेंगे। इस अनुपेक्षणीय आकर्षण को हृदय में धारण करके वे आनन्द-विभोर हो उठे। इधर कामारपुकुर में चंद्रमणि देवी ने देखा कि जुगी शिवमन्दिर से एक तेजपुंज निकलकर उनके शरीर में विलीन हो गया। घर वापस आने पर क्षुदिराम ने यह समाचार सुना। दोनों श्रीभगवान की महिमा का चिन्तन करते हुए दिन बिताने लगे। अन्त में फाल्गुन शुक्ल द्वितीया आई। भगवान स्वयं धराधाम में अवतीर्ण हुए।

श्रीमद्भागवत में भगवान के आविर्भाव के समय प्रकृति का एक अपूर्व वर्णन हुआ है। समूची प्रकृति महाराजाधिराज के आह्वान में व्यस्त है। प्रत्येक उपकरण सुसज्जित है –

दिशः प्रसेदुर्गगनं निर्मलोडुगणोदयम्।
मही मंगलभूयिष्ठ-पुर-ग्राम व्रजाकरा।।
नद्यः प्रसन्नसलिला ह्रदा जलरुहश्रियः।
द्विजालिकुलसन्नादस्तबका वनराजयः।।[७]

अर्थात् दिशाएँ प्रसन्न हैं, आकाश निर्मल है, मेघमुक्त आकाश में तारे जगमगा रहे हैं, धरती पर नगर, ग्राम, गोचारण भूमि, भूगर्भ, सभी मंगलमय हैं। नदियों का जल स्वच्छ है। सरोवर में कमल खिले हुए हैं। वन में गुच्छ के गुच्छ फूल खिले हुए हैं। पक्षी चहचहा रहे हैं।

प्रकृति आनन्दमय है। यह वर्णन शरत के आगमन की याद दिला देता है। भगवान श्रीकृष्ण का आविर्भाव ठीक इसी समय हुआ था। लेकिन श्रीरामकृष्ण का आगमन वसंत की सूचना देता है। इसीलिए स्वामी प्रेमेशानन्द कहते हैं : ''मलय समीरे भेसे आसे कि मधुर गीती लहरी'' (मलय समीर में क्या ही मधुर गीति लहरी बहती आ रही है)। 'लीलाप्रसंग' में पुण्य क्षण के वर्णन की क्या ही अनुपम भाषा है : ''शरत, हेमंत और शीत ऋतु बीत जाने के बाद क्रमशः ऋतुराज वसंत उपस्थित हुआ। शीत और ग्रीष्म के सुखद सम्मिलन से मधुमय फाल्गुन स्थावर और जंगम के भीतर नवीन प्राण का संचार करता हुआ आज छठे दिन संसार में समागत हुआ। जीव-जगत में एक विशेष उत्साह, आनन्द और प्रेम की प्रेरणा सर्वत्र लक्षित हो रही है। शास्त्र में कहा गया है, ब्रह्मानन्द की एक कणिका सबके भीतर निहित रहकर उन सबको सरस कर रखा है, इस दिव्योज्ज्वल आनन्द कणिका की कुछ अधिक मात्रा पाकर ही क्या यह काल संसार में सर्वत्र उल्लास से आया है?''[८]

शिशु गदाधर दिन-दिन बढ़ता जाता है और उसका आकर्षण भी उसी प्रकार बढ़ता जाता है। क्षुदिराम और चन्द्रमणि एक घड़ी के लिए भी इस बच्चे को छोड़ नहीं पाते। बच्चे के प्रति माता-पिता का एक मायिक आकर्षण रहता है। लेकिन यह आकर्षण मायिक नहीं है, यह दैवी, अलौकिक आकर्षण है। इसीलिए प्रत्येक कार्य के बीच-बीच में गदाधर का चिन्तन उनके लिए चुम्बक के साथ लोहे के सम्पर्क की तरह हो जाता है। भागवत में आया है, यशोदा दही मथते समय गोपाल का चिन्तन करती हैं। फलतः गोपाल उनके मन से एक क्षण के लिए भी लोप नहीं होते। भागवतकार कहते हैं –

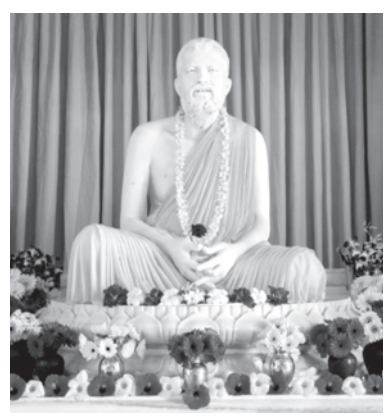

यानि यानीह गीतानि तद्बालचरितानि च।
दधिनिर्मन्थने काले स्मरन्ती तान्यगायत।।[९]

बालक गदाधर को एकबार आँखों से देखने के लिए कामारपुकुर के स्त्री-पुरुष, शिशु-युवा, आबालवृद्धवनिता सब भीड़ लगा देते हैं। बालक के कंठ से सुमधुर संगीत, सुंदर नाट्याभिनय, पाला कीर्तन, कथकता सुनने के लिए सभी एकत्र हो जाते हैं। वृन्दावन में गोपियाँ जिस प्रकार यमुना की ओर जाते समय बालक श्रीकृष्ण को देखती हैं और जब लौटकर आती हैं, तब एक झलक पाने को उनमें कैसी आकुलता होती है ! यह सब दैवी आकर्षण है !

रानी रासमणि

कालचक्र का प्रवाह आगे बढ़ा। गदाधर धीरे-धीरे दक्षिणेश्वर में रानी रासमणि के कालीमंदिर में उपस्थित हुए। उस समय भी अभी फूल की कली मात्र थे। उनके बड़े भाई रामकुमार प्रसिद्ध विद्वान् थे। उन्हीं के विधान के अनुसार कैवर्त जाति की रानी द्वारा निर्मित देवालय का उद्घाटन और सेवा-पूजा का प्रवर्तन हुआ। उदासीन और अपना आपा खोये हुए भाई को वे संसार का पाठ पढ़ाने के लिए यहाँ ले आए। लेकिन गदाधर अपने ही भाव में विभोर थे। गंगा के तट पर मूर्ति बनाते, भगवद् भजन गाते रहते और समस्त सांसारिकता की ज्वाला से बचते हुए रासमणि की दृष्टि से दूर ही रहते।

लेकिन अन्त तक बच नहीं सके। रानी के जमाता शिक्षा-दीक्षा में निपुण और राज-काज में दक्ष थे। रानी के अत्यन्त विश्वासपात्र थे। ''मन्दिर की स्थापना के कुछ सप्ताह बाद ठाकुर के सौम्यदर्शन, व्यक्तित्व, कोमल प्रकृति, धर्मनिष्ठा और छोटी उम्र ने रानी रासमणि के जमाता श्रीयुत मथुरबाबू की आँखों को आकृष्ट किया।''[१०] यह मनोहर मूर्ति ब्रह्मचारी कौन है? विषयी मथुरबाबू गदाधर के आकर्षण की उपेक्षा नहीं कर पाए। सान्निध्य प्राप्त करने की आशा से सुअवसर की प्रतीक्षा करने लगे। कुछ समय बाद हम देखते हैं कि मथुरबाबू के प्रयत्न से गदाधर दक्षिणेश्वर मन्दिर में 'भवतारिणी के पुजारी ठाकुर' के रूप में नियुक्त कर लिए जाते हैं।

रानी भी उनके प्रति आकृष्ट हुईं। १२६२ बंगाद (अर्थात् सन् १८५५ ई.) का भादों का महीना। नन्दोत्सव। पुजारी क्षेत्रनाथ गोविन्दजी को शयन कराने के लिए जा रहे थे कि सहसा मूर्ति हाथ से छूटकर जमीन पर गिर गई। मूर्ति का पैर टूट गया। टूटी हुई मूर्ति को विसर्जित करके नई मूर्ति की स्थापना का अन्तिम निर्णय लेने के लिए पंडित-सभा बैठी। सभा में निर्णय के अनुसार नई मूर्ति बनाने का आदेश दिया गया। लेकिन मथुरबाबू के मन में एक विचार उठा कि इस मामले में मनोहर मूर्ति इस ब्रह्मचारी का क्या विचार है, यह जानना चाहिए। रानी ने भी इस विचार का अनुमोदन किया तब गदाधर के आगे प्रश्न रखा गया। उन्होंने उत्तर दिया – ''रानी के किसी दामाद का गिरकर पैर यदि टूट जाता है, तो क्या उसका त्याग करके किसी और को लाकर उसकी जगह बैठाया जाता या उसकी चिकित्सा की व्यवस्था होती? इस मामले में भी उसी प्रकार करना उचित है – टूटी हुई मूर्ति को जोड़कर, जैसी पूजा होती है वैसी ही पूजा की जाय। त्याग क्यों करेंगे?[११]

इस प्रकार के व्यावहारिक तर्कपूर्ण निर्णय ने रासमणि को जिस प्रकार आश्वस्त किया, उसी प्रकार गदाधर के प्रति भी उनकी दृष्टि आकृष्ट हुई। एक और दिन गदाधर के प्रति रासमणि के आकर्षण ने चरम रूप ग्रहण किया। रासमणि देवालय में आई हुई थी। भवतारिणी के मन्दिर में बैठकर गदाधर के अपूर्व सुरीले कंठ से गान सुन रही थीं – ''कोन हिसाबे हरहृदे छाँड़ियेछो मा पद दिए''[१२] (किस नियम से, ऐ माँ, महादेव की छाती पर पैर रखकर खड़ी हो)। गायक और श्रोता दोनों तन्मय थे। सहसा छन्द टूट गया। रानी के मन में राज-काज की चिन्ता उभर आई। साथ ही गायक की प्रतिक्रिया हुई। वे रानी के अंग पर आघात करके बोल उठे – ''यहाँ भी वही चिन्ता।''[१३] कर्मचारीगण पुजारी ब्राह्मण का इस प्रकार का अशिष्ट आचरण देखकर 'अरे अरे' करते हुए मारने दौड़े। लेकिन रानी ने उन्हें मना करते हुए गम्भीर स्वरों में आदेश दिया – ''भट्टाचार्य महाशय का कोई दोष नहीं है; तुम लोग उनको कुछ मत बोलो।''[१४]

रानी रासमणि

अज्ञानी कर्मचारियों ने कुछ नहीं समझा। समझते ही कैसे? भगवान ने स्वयं कहा है, ''अवजान्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्''[१५] (मूढ जन मुझे मनुष्य शरीर के आश्रित मानकर अर्थात् साधारण मनुष्य मानकर मेरी अवज्ञा करते हैं)। लेकिन रानी के आश्यर्च की कोई सीमा न थी। ये कौन हैं? जो जीव के अन्तर की बात जान लेते हैं, ये साधारण

मनुष्य नहीं हैं। ये तो अन्तर्यामी हैं। बृहदारण्यक उपनिषद् में कहा है, ''यः सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन् सर्वेभ्यो भूतेभ्योऽन्तरो यं सर्वाणि भूतानि न विदुर्यस्य सर्वाणि भूतानि शरीरं यः सर्वाणि भूतान्यन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्ममृतः।''[१६] (जो समस्त भूतों में स्थित रहनेवाला समस्त भूतों के भीतर है, जिसे समस्त भूत नहीं जानते, समस्त भूत जिसके शरीर हैं और जो भीतर रहकर समस्त भूतों का नियमन करता है, वह तुम्हारी आत्मा अन्तर्यामी अमृत है।)

इसके बाद रानी रासमणि ने स्वयं को इस माया मनुष्य रूपधारी गदाधर के श्रीचरणों में जीवन भर के लिए समर्पित कर दिया।

मथुरानाथ विश्वास

पहली ही भेंट में मथुरबाबू को गदाधर ने आकृष्ट किया था। दिन बीते, मास बीते। मथुर का आकर्षण बढ़ता ही गया। स्वामी गम्भीरानन्द जी ने लिखा है, मथुरबाबू श्रीरामकृष्ण को जितना ही देखते, उतना ही अधिक आकृष्ट होते। एक दिन ठाकुर के हाथों बनी एक सुन्दर शिवमूर्ति देखकर वे चकित रह गए और रानी को उसे दिखाया। उसी समय उनके मन में संकल्प उठा, श्रीरामकृष्ण को देवपूजा में लगाना होगा। इस प्रकार मथुर के ही आग्रह से वे भवतारिणी के पुजारी पद पर नियुक्त हुए।''[१७]

श्रीरामकृष्ण आत्मवत् सेवानिरत थे। वैधी भक्ति छोड़कर उस समय वे रागानुराग या पराभक्ति के स्तर पर स्थित थे। आध्यात्मिक व्याकुलता की चरमतम अभिव्यक्ति हुई। मानो आँधी उठ रही थी। यह अवस्था साधारण विषयासक्त जीव की बोधशक्ति के परे है। कर्मचारियों ने समझा, यह तो अनाचार है ! जानबाजार में मथुरबाबू के कानों तक खबर पहुँची। सबने सोचा, इस बार भट्टाचार्य महाशय की नौकरी गई। एक दिन मथुरबाबू स्वयं दक्षिणेश्वर में उपस्थित हुए। भाव-विह्वल पुजारी देवी के साथ एकात्म हो रहे थे। विस्मय-विमुग्ध मथुरबाबू लौटते समय कहते गए, ''छोटे भट्टाचार्य महाशय चाहे जो करें, जैसा करें, तुम लोग उनको बाधा मत देना। पहले मुझे बतलाना, फिर मैं जैसा कहूँगा, वैसा करना।''[१८]

मथुरानाथ विश्वास

उस दिन मथुरबाबू दक्षिणेश्वर में थे। श्रीरामकृष्ण शिवमन्दिर में 'शिवमहिम्नःस्तोत्रम्' से 'असितगिरि समं' इत्यादि श्लोक का पाठ करके भाव-विह्वल अवस्था में अश्रुपूरित नयनों से केवल यही बोले जा रहे थे – ''हे महादेव ! तुम्हारे गुणों का वर्णन मैं भला कैसे करूँगा !''[१९] कर्मचारी यह 'पागलपन' देखने को दौड़े-दौड़े आए। मथुरबाबू भी पीछे-पीछे आए। जब सभी लोग ठाकुर का हाथ पकड़कर उन्हें हटा देने की बात कह रहे थे, तब आश्चर्यचकित मथूरबाबू ने आदेश दिया, ''जिसकी गर्दन पर दो सिर हों वही इस समय भट्टाचार्य महाशय को स्पर्श करने जाएगा।''[२०]

इतना देखकर भी साधारण मनुष्य का संशय नहीं जाता। बीच-बीच में वही संशय मथुर के मन में भी उभरता, इसीलिए भैरवी ब्राह्मणी के द्वारा श्रीरामकृष्ण के अवतारत्व की घोषणा करने के बाद भी मथुर उसे असंदिग्ध रूप से मान नहीं पाए। अन्त में श्रीरामकृष्ण के परामर्श से पंडित सभा का आयोजन हुआ, जिसमें उन्हीं की जीत हुई। ''मथुर के समान बुद्धिमान व्यक्ति के लिए, इसके बाद यह समझना बाकी न रहा कि इस बात का महत्त्व है, इसको सहज ही उड़ा देना सम्भव नहीं है।''[२१]

मथुरबाबू दूसरों की बात सुनकर या केवल तर्क के द्वारा नहीं, बल्कि श्रीरामकृष्ण की त्याग-तितिक्षा देखकर आकृष्ट हुए। उन्होंने उनको नाना प्रकार की इहलौकिक प्रलोभन की वस्तुसामग्री प्रदान करके देखा कि शयन में, स्वप्न में, निद्रा में, जागरण में, सभी अवस्थाओं में श्रीरामकृष्ण का मन-प्राण, यहाँ तक कि इन्द्रियाँ भी इन वस्तुओं के प्रति आकृष्ट नहीं हो रही हैं।

अन्त में वह दिन आया, जब श्रीरामकृष्ण ने मथुर को एक बार ही अपने पास खींच लिया। दक्षिणेश्वर में ठाकुर अपने कमरे के बगल में पूर्व से पश्चिम तक विस्तृत बरामदे में टहल रहे थे। इधर कोठी में अपने घर में बैठे मथुर देख रहे थे। सहसा मथुर ने दौड़कर उनके दोनों पाँव कसकर पकड़ कर आँखों में आँसू भरे हुए कहा, ''बाबा, तुम टहल रहे हो और मैंने स्पष्ट देखा कि जब तुम इधर की ओर आ रहे थे, तब तुम नहीं, मेरी यह मन्दिर की माँ काली हैं। जब पीछे मुड़कर उधर जा रहे थे, तब देखा कि ये तो साक्षात्

शेष भाग पृष्ठ १४९ पर

आत्मशक्ति का बोध

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

यह घटना कक्षा चौथी में पढ़ने वाली ९ वर्षिय हेमाप्रिया की है, जब आतंकवादी उनके घर में घुसे आये, तब इस बच्ची ने किस तरह उन आतंकवादियों का सामना किया। उसकी माँ पद्मावती, बहनें ऋषिता और अवंतिका हैं। यह कहानी फरवरी, २०१८ की है, जब ये जम्मू में थे। उनके पिता फौज में हैं। रात को उनकी माँ और दोनों बहनें सो रही थी। उनके घर से १ किलो मीटर दूर गनशूट का अभ्यास होता था। उससे भी तेज-तेज बम की आवाज आ रही थी। जैसे कि कोई बिल्डिंग फट रही है। तब उनकी माँ उठ गई। मुख्य दरवाजा बंद था, लेकिन शयनकक्ष का दरवाजा खुला था। थोड़ी हलचल मच गई, ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर होने लगा। तभी पड़ोसी की आवाज आ रही थी, तब उनकी माँ ने दरवजा खोल दिया और उनसे पूछा – भैया क्या हुआ? तभी केन्ट का अलार्म बजा। पड़ोसी से पूछने पर पता चला, सच में भवन में कोई घुस गया है। तभी उनकी माँ अंदर जाकर चाबी और ताला लेकर आती है और पड़ोसी से बन्द करने को कहती है, पर उन्होंने नहीं लगाया और तब पद्मावती ने अपने मकान का ऊपर और नीचे का दरवाजा बंद कर लिया। फिर उन्होंने सोचा ऊपर जाकर अपने बच्चों के साथ दरवाजा बंद कर लेंगे, पर इससे पहले ही आतंकवादी उनके घर में घुस आये। माँ और दोनों बच्चों ने हाथ से दबाकर दरवाजा बंद करके रखा। उन्होंने अपने साथ मिर्च पाउडर रखा और वे अपना दरवाजा हाथ से दबाकर बंद रखा। २ से ३ मिनट के बाद नीचे वाली चाची और उनके बच्चे को रोने की आवाज आने लगी। फिर बहुत तेज-तेज उनके नीचे और आजू-बाजू वालों के दरवाजा तोड़ने की आवाजें आने लगी। १ मिनट के बाद हेमाप्रिया का भी दरवाजा आतंकवादी तोड़ने लगे। एक दूसरा दरवाजा रुक-रुक कर तोड़ने लगा। ५ घण्टे तक माँ और उनकी बेटी हेमप्रिया ने हाथों से दरवाजा को पकड़ रखा था। आतंकवादी को लगा कि अंदर हेमाप्रिया के पापा हैं। तभी दरवाजे के छोटे से गेप से आतंकवादी ने ग्रेनाइट अंदर फेंका। बम तो बाहर रह गया पर बम की चिंगरी दरवाजे के छिद्र से अंदर चला गया। जहाँ आतंकवादी ने गन रखा था, वहाँ हेमाप्रिया का मुँह था, पर उनकी माँ ने तुरन्त उसे जैसे ही किनारे किया, वैसे ही उनकी माँ के हाथ में लग गया। ग्रेनाइट का टुकड़ा उनके माँ के हाथ में घुस गया। जिससे पुरी तरह से हाथ को नुकसान हुआ। एक उँगली और नख पुरा खराब हो गया। हाथ काम करना बंद कर दिया। कलाई की हड्डी टूट गई थी। पूरे ५ घण्टे दरवाजा बहादुरी के साथ हाथ के सहारे बंद कर रखा था। आतंकवादी घर में घुसकर किचन से घर का सारा सामान उलट-पलट कर दिये। चोट लगने के बाद भी माँ होश में थी। थोड़ी-थोड़ी बेहोशी थी। ५ बजे आतंकवाद आये थे ५:३० बजे माँ को चोट लगी

हेमाप्रिया माँ पद्मावती के साथ

थी। ५:३० से १० बजे तक बेहोश नहीं हुई थी, हाथ से लगातार खून बह रहा था, बिल्कुल पानी की तरह। हेमाप्रिया को भी एक हाथ में चोट लगी थी। हाथ काम नहीं कर रहा

शेष भाग पृष्ठ १४६ पर

प्रश्नोपनिषद् (३२)

श्रीशंकराचार्य

(सनातन वैदिक धर्म के ज्ञानकाण्ड को उपनिषद् कहते हैं। हजारों वर्ष पूर्व भारत में जीव-जगत् तथा उससे सम्बद्ध गम्भीर विषयों पर प्रश्न उठाकर उनकी जो मीमांसा की गयी थी, ये उन्हीं के संकलन हैं। वैदिक धर्म की पुन: स्थापना हेतु आचार्य ने इन पर सहज-सरस भाष्य लिखकर अपने सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था। प्रश्नोपनिषद् पर लिखे उनके भाष्य का हिन्दी अनुवाद 'विवेक-ज्योति' के पूर्व-सम्पादक स्वामी विदेहात्मानन्द जी द्वारा किया गया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' के पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। –सं.)

यत्पृष्टं कतर एष देवः स्वप्नान् पश्यति इति तद्-आह –

जो पूछा था कि कौन-सा देव स्वप्न को देखता है, अब उसी को बताते हैं –

अत्रैष देवः स्वप्ने महिमानमनुभवति। यद्दृष्टं दृष्टमनुपश्यति श्रुतं श्रुतमेवार्थमनुशृणोति देशदिगन्तरैश्च प्रत्यनुभूतं पुनः पुनः प्रत्यनुभवति दृष्टं चादृष्टं च श्रुतं चाश्रुतं चानुभूतं चाननुभूतं च सच्चासच्च सर्वं पश्यति सर्वः पश्यति।।४/५।।

अन्वयार्थ – अत्र (इस) स्वप्ने (स्वप्नावस्था में) एषः (यह) देवः (जिस मन में इन्द्रिय-आदि एकीभूत हो जाते हैं, वही मन) महिमानं (विभूति, विषय-विषयी-रूप में अनेकत्व प्राप्ति-रूप महिमा का) अनुभवति (अनुभव करता है,) यत् दृष्टम् दृष्टम् (जो-जो जाग्रत अवस्था में दृष्ट हुआ है) (वही अविद्यावश) अनुपश्यति (बाद में स्वप्न के रूप में देखता है)। श्रुतम् श्रुतम् एव अर्थम् (जो कुछ सुना गया है), अनुशृणोति (मानो) वही-वही स्वप्न में श्रवण करता है), देश-दिगन्तरैः च (घर आदि स्थान के और उत्तर आदि दिशा के भीतर) प्रत्यनुभूतम् (जो उत्कृष्ट रूप से अनुभूत हुआ है, वह) पुनः पुनः (बारम्बार स्वप्न में) (मानो) प्रत्यनुभवति (अनेक बार देखता है); दृष्टम् च (इस जन्म में देखे हुए) (तथा) अदृष्टम् च (पिछले जन्म में देखे हुए), श्रुतम् च अश्रुतम् च (इस जन्म में सुने हुए तथा पूर्वजन्मों में सुने हुए), अनुभूतम् च अननुभूतम् च (इस जन्म में तथा पूर्वजन्मों में मन द्वारा अनुभव किये हुए), सत् च असत् च (सत्य जल आदि तथा असत्य मरीचिका आदि) – (अर्थात्) सर्वम् (जो कुछ कहा गया और जो नहीं कहा गया, वह सब कुछ) (मानो) पश्यति (देखता है) सर्वः (सन्) (सभी प्रकार के मनोकामनाओं से उपाधियुक्त होकर) पश्यति (दर्शन करता है)।

भावार्थ – यह मनोरूप देवता, इस स्वप्न अवस्था में महिमा का अनुभव करता है। जो-जो पहले देखा गया है, उन्हीं का स्वप्न में मानो दर्शन करता है, जो-जो पहले सुना गया है, उन्हीं का स्वप्न में मानो श्रवण करता है, विभिन्न स्थानों तथा दिशाओं में जो-जो अनुभूत हुआ है, स्वप्न में बारम्बार उन्हीं का अनुभव करता है; इस जन्म तथा पूर्व-जन्मों में जो-जो देखा गया है, सुना गया है, मन के द्वारा अनुभूत हुआ है और जो कुछ सत्य तथा जो कुछ भ्रान्ति है वह सभी प्रकार के मनो-कामनाओं की उपाधि से युक्त होकर सब कुछ दर्शन करता है।

भाष्य – अत्र उपरतेषु श्रोत्र-आदिषु देहरक्षायै जाग्रत्सु प्राण-आदि-वायुषु प्राक्-सुषुप्ति-प्रतिपत्तेः एतस्मिन् अन्तराल एष देवो अर्क-रश्मिवत् स्व-आत्मनि संहृत-श्रोत्रादि-करणः स्वप्ने महिमानं विभूतिं विषय-विषयि-लक्षणम् अनेकात्म-भाव-गमनम् अनुभवति प्रतिपद्यते।

भाष्यार्थ – इस स्वप्न अवस्था में, श्रोत्र आदि इन्द्रियाँ उपरत होने पर, देह की रक्षा के लिए प्राण वायु आदि के जागते रहने पर, सुषुप्ति आने के पहले अर्थात् (जाग्रत-सुषुप्ति के) अन्तराल में, यह मन-रूपी देव – अस्ताचल-गामी सूर्य की किरणों के समान, श्रोत्र आदि इन्द्रियों को अपने में खींचे हुए अनेक विषयों तथा द्रष्टाओं के रूप में अपनी महिमा का अनुभव करता है। **(क्रमशः)**

मोती ले लो और सीपी को फेंक दो। गुरु ने जो मन्त्र दिया उसका जप करने में मग्न हो जाओ। गुरु की मनुष्यसुलभ दुर्बलताओं की ओर मत देखो। कोई तुम्हारे गुरु की निन्दा करता हो तो उसकी बात कभी मत सुनो। गुरु माता-पिता से भी बड़े है। यदि कोई तुम्हारे सामने तुम्हारे माता-पिता का अपमान करे तो क्या तुम उसे चुपचाप सुन लोगे? आवश्यक हो तो लड़कर भी गुरु के सन्मान की रक्षा करो।

– श्रीरामकृष्ण देव

परिश्रम और दृढ़ संकल्प : सफलता के सोपान

स्वामी गुणदानन्द

रामकृष्ण मठ, नागपुर

किसी विद्वान् ने उचित ही कहा है कि परिश्रम सफलता की कुंजी है। आज यदि हम विश्व के महान पुरुषों अथवा नारियों के जीवन-चरित का अवलोकन करें, तो हम यही पाएँगे कि उनकी सफलता के पीछे उनके सतत अभ्यास व परिश्रम का महत्त्वपूर्ण योगदान है ।

आइए जानते हैं एक ऐसे परिश्रमी गौरवशाली व्यक्तित्व डॉ.कैलासवटिवु सिवन के बारे में जो भारत के एक अन्तरिक्ष वैज्ञानिक हैं और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के अध्यक्ष रह चुके हैं, जिन्होंने जीवन के विभिन्न आयामों में कठिनाइयों का सामना करते हुए अनेक उपलब्धियों को प्राप्त किया है।

डॉ. कैलासवटिवु सिवन

कैलासवटिवु सिवन का जन्म १४ अप्रैल, १९५७ में तमिलनाडु के कन्याकुमारी जिले में नागरकोइल के निकट मेला सरक्कलविलाई में हुआ। उनके पिता का नाम कैलासावदीवुनादार और माता चेलमल्ल हैं। उन्होंने प्रारंभिक शिक्षा सरकारी स्कूल में तमिल माध्यम में प्राप्त की। अध्ययन में उनकी रुचि थी इसलिए पिता और परिवार के अन्य सदस्यों ने उन्हें प्रोत्साहित किया।

आर्थिक चुनौती

डॉ. सिवन का परिवार आर्थिक संकट से जूझ रहा था। आर्थिक विपन्नता का सामना करते हुए उन्होंने नागरकोइल के एस.टी. हिन्दू कॉलेज से बी.एससी. (गणित) १०० प्रतिशत अंकों के साथ उत्तीर्ण की और वे अपने परिवार के पहले स्नातक सदस्य बने। आर्थिक चुनौती के कारण पिता सभी बच्चों की उच्च शिक्षा का खर्च वहन नहीं कर सके, जिसके कारण परिवार के अन्य बच्चे उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके।

सफलता परिश्रम का परिणाम है

परिश्रम के बिना जीवन व्यर्थ होता है। जो परिश्रम करते हैं, ऐसे व्यक्ति कठिनाइयों व संकटों के आने से भयभीत नहीं होते, अपितु उस संकट के निदान का समाधान ढूँढ़ते हैं।

के. सिवन जब कॉलेज में अध्ययन कर रहे थे, तो वे खेतों में अपने पिता की सहायता किया करते थे। इसीलिए घर के निकटस्थ कॉलेज में उनको प्रवेश दिलाया गया। गर्मियों के दिनों में सिवन के पिता आम का व्यापार भी करते थे। वे स्वयं पिता के साथ आम के बाग में भी काम करते थे। जब वे घर पर होते थे, तब उनके पिता मजदूरों को नहीं बुलाते थे। वे उनसे ही काम कराते थे। बचपन में उन्होंने कभी जूते और सैंडल नहीं पहने थे। वे धोती पहनकर कॉलेज जाते थे। जब उन्हें मद्रास इन्स्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (एम.आई.टी.) में प्रवेश मिला, तब पहली बार पैंट पहनी थी। एम.आई.टी. से उन्होंने १९८० में एयरोनॉटिकल इंजीनियरिंग की तथा १९८२ में इण्डियन इन्स्टिट्यूट ऑफ साइंसेज (आइ.आइ.एससी.) से इंजीनियरिंग में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की। २००६ में उन्होंने आई.आई.टी., मुम्बई से एयरोस्पेस इंजीनियरिंग में पीएचडी की डिग्री प्राप्त की।

अद्भुत, अविस्मरणीय और अचम्भित कर देनेवाला क्षण

श्रीकृष्ण ने भी अर्जुन को गीता के उपदेश द्वारा समझाया – **'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।'**

देश के सबसे अहम मून मिशन चंद्रयान-२ को डॉ. सिवन के नेतृत्व में ही इसरो ने सफलतापूर्वक लॉन्च किया था। भले ही यह पूरी तरह से सफल नहीं हो पाया हो, चंद्रयान-२ के लैंडर की सॉफ्ट लैंडिंग न हो पाने के बाद पहले ही प्रयास में अपने लक्ष्य के इतने करीब पहुँचने के लिए इसरो प्रशंसा का पात्र है। जब मिशन चंद्रयान-२ सफल नहीं हो पाया, तब इसरो प्रमुख डॉ. सिवन की आँखों से आँसू निकल आये थे, लेकिन प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने गले से लगाकर पीठ थपथपाकर डॉ. सिवन का हौसला बढ़ाया और कहा, पूरा देश आपके साथ है। हमारी सफलता के रास्ते में भले ही एक रुकावट आई, लेकिन हम अपनी मंजिल से डिगे नहीं हैं। हम निश्चित रूप से सफल होंगे।

असफलता जीवन की यात्रा का एक हिस्सा है और हमें असफलताओं से भी सीख लेनी चाहिए। एक बार जब आप अपने लक्ष्य को निर्धारित कर, अपने मन को अनुशासित कर लेते हैं, तो आप अपने आप में एक महान परिवर्तन ला सकते हो।

योगदान

स्वामी विवेकानन्द मानते थे कि राष्ट्र के पुनरुत्थान हेतु पश्चिमी विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता है, ताकि हम उनके द्वारा अपने दैनन्दिन जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। परन्तु इसके साथ ही वे जनमानस में वैज्ञानिक मानसिकता उत्पन्न करने की आवश्यकता का अनुभव करते थे।

डॉ सिवन ने अंतरिक्ष कार्यक्रम के लिए क्रायोजेनिक इंजन के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनके अध्यक्ष के नेतृत्व में इसरो ने कई ऐतिहासिक क्षण देखें हैं। वे वर्ष १९८२ में इसरो में आए और उन्होंने पीएसएलवी परियोजना पर कार्य प्रारम्भ किया। उन्होंने ऐंड टू ऐंड मिशन प्लानिंग, मिशन डिजाइन, मिशन इंटीग्रेशन ऐंड ऐनालिसिस में काफी भूमिका निभाई है। वे इंडियन नेशनल ऐकेडमी ऑफ इंजीनियरिंग, एयरोनॉटिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया और सिस्टम्स सोसाइटी ऑफ इंडिया में शोधार्थी हैं। उनके पेपर कई शोध पत्रिकाओं में में प्रकाशित हुए हैं। उन्हें वर्ष १९९९ में डॉ. विक्रम साराभाई रिसर्च अवॉर्ड (श्री हरी ओम आश्रम प्रेरित) तथा अप्रैल २०१४ में डॉक्टर ऑफ साइंस (सत्यभामा यूनिवर्सिटी, चेन्नई) जैसे पुरस्कारों से पुरस्कृत किया गया है। सिवन को २०१८ में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था।

प्रेरणा

लैंडर विक्रम भले ही चंद्रमा की सतह पर नहीं पहुँच पाया, लेकिन जिस प्रकार ऑर्बिटर चन्द्रमा के चारों ओर चक्कर लगाकर अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रहा है, उसी प्रकार डॉ. सिवन ने आर्थिक कठिनाइयों तथा चुनौतियों का सामना करते हुए अपने जीवन में कई उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। एक गरीब किसान के घर में पैदा हुए के. सिवन ने धरती से अन्तरिक्ष तक की यात्रा में चुनौतियों तथा कठिनाइयों का सामना किया और सफलता के शिखर पर पहुँचे। मेहनत और दृढ़ संकल्प ही उनकी सफलता के सोपान हैं। डॉ. के. सिवन का जीवन हम सबके लिए प्रेरणादायक है।

भारत की प्रक्षेपास्त्रांगना (Missile Woman of India) : डॉ. टेसी थॉमस

आधुनिक युग बहुत प्रतिस्पर्धी है। अत: अपने लक्ष्य को भेदने के लिए कड़ी मेहनत के साथ व्यक्ति का दृढ़ संकल्पित होना आवश्यक है। भारत के कई महान व्यक्तित्वों ने अविश्वसनीय सफलता, दृढ़ संकल्प से प्राप्त किया है।

आइये जानते हैं परिश्रमी और दृढ़ संकल्पित श्रीमती डॉ. टेसी थॉमस के बारे में जो भारत की एक प्रक्षेपास्त्र वैज्ञानिक हैं। वे 'भारत की प्रक्षेपास्त्रांगना' के नाम से जानी जाती हैं।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा है – **'अगर तुम सूरज की तरह चमकना चाहते हो तो पहले सूरज की तरह जलो।' 'इससे पहले कि सपने सच हों, आपको सपने देखने होंगे।'**

कठिन क्षण

डॉ.ए.पी.जे अब्दुल कलाम ने कहा था: मनुष्य को जीवन में कठिनाइयों की आवश्यकता होती है क्योंकि सफलता का आनंद उठाने के लिए वे आवश्यक हैं।

केरल के अलप्पुझा नगर के एक सीरियाई ईसाई परिवार में अप्रैल १९६३ में डॉ.टेसी थॉमस का जन्म हुआ। जब वे

१३ वर्ष की थीं, तब उनके पिता को स्ट्रोक हुआ, जिससे उनके शरीर का दाहिना भाग लकवा से ग्रस्त हो गया। डॉ. टेसी की माँ अध्यापिका थीं। इस घटना के बाद उनकी माँ ने परिवार की देख-भाल की। उनका बचपन, थुम्बा रॉकेट स्टेशन के समीप बीता और वहीं से प्रक्षेपास्त्रों में उनकी रुचि

डॉ. टेसी थॉमस

पैदा हुई। डॉ.टेसी की चार बहनें और एक भाई है, जिनमें से दो अभियन्ता हैं और एक ने प्रबन्धन में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। उनके माता-पिता ने सभी भाई-बहनों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया और सबको आत्मनिर्भर बनना सिखाया।

डॉ. टेसी ने सेंट माइकल हायर सेकेंडरी स्कूल से प्रारंभिक शिक्षा व हायर सेकेंडरी सेंट जोसेफ गर्ल्स स्कूल से पूरी की। उन्होंने थ्रिसूर के सरकारी अभियांत्रिकी कालेज में अभियांत्रिकी में स्नातक स्तर की पढ़ाई की। उसके बाद इंस्टिट्यूट आफ आरमामेंट टेक्नोलोजी, पुणे से एम. टेक किया है और डी. आर.डी.ओ. से पी.एच.डी. भी की है।

परिश्रम अथवा कार्य ही मनुष्य की वास्तविक पूजा है। इसके बिना मनुष्य का अभ्युदय होना कठिन है। परिश्रम के द्वारा ही कोई व्यक्ति एक महान कलाकार, इंजीनियर, डॉक्टर अथवा एक महान वैज्ञानिक बनता है। महान लोगों का कठिन परिश्रम ही किसी देश व राष्ट्र को विश्व पटल पर प्रतिष्ठित करता है।

कड़ी मेहनत और दृढ़ संकल्प से सफलता के शिखर पर पहुँचा जा सकता हैं। दृढ़ संकल्प अभ्यास से विकसित करना पड़ता है।

डॉ. टेसी थामस रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन में अग्नि चतुर्थ की परियोजना निदेशक एवं एरोनाटिकल सिस्टम्स की महानिदेशिका थीं। भारत में प्रक्षेपास्त्र परियोजना का प्रबन्धन करने वाली वे पहली महिला हैं। ४८ वर्षीय भारतीय महिला वैज्ञानिक टेसी थॉमस को १९८८ से अग्नि प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम से जुड़ने के बाद से ही अग्निपुत्री के नाम से भी जाना जाता है। उनकी अनेक उपलब्धियों में अग्नि-२, अग्नि-३ और अग्नि-४ प्रक्षेपास्त्र की मुख्य टीम का हिस्सा बनना और उनका सफल परीक्षण है। वे पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम को अपना प्रेरणा स्रोत मानती हैं।

योगदान

स्वामी विवेकानन्द धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में केवल वैज्ञानिक मानसिकता लाने के ही पक्षधर नहीं थे अपितु देश को भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, जैव तकनीकी, नाभिकीय तकनीकि, सूचना तकनीकी आदि विज्ञान की सभी विधाओं एवं शाखाओं में पारंगत देखना चाहते थे।

श्रीमती डॉ. टेसी थॉमस ने विज्ञान की विधाओं एवं शाखाओं में दक्षता प्राप्त की और स्वामी विवेकानन्द की विज्ञान की सभी विधाओं की परिकल्पना अनुसार राष्ट्र के प्रक्षेपास्त्र परियोजना में सराहनीय योगदान दिया। यह सब उनका परिश्रम तथा दृढ़ संकल्प ही था, जिससे उन्होंने सफलता प्राप्त की।

अत: दृढ़ संकल्प का निरन्तर अभ्यास करना चाहिए, क्योंकि यह हमारे जीवन को और साथ ही आस-पास के लोगों के जीवन को बदल सकता है। एक दृढ़ संकल्पित व्यक्ति बनने के लिए जीवन को अनुशासित करना होगा।

महिला-प्रधान टीम का संचालन

डॉ. थॉमस पाँच अन्य महिला वैज्ञानिकों के साथ अग्नि-५ परियोजना की अगुआई कर रही हैं। डीआरडीओ में प्रक्षेपास्त्र परियोजना से जुड़े २५० वैज्ञानिकों में २० महिला वैज्ञानिक हैं। वे २००८ में अग्नि प्रणाली की परियोजना निदेशक के बाद उन्हें अग्नि-२ का नेतृत्व करने का उत्तरदायित्व दिया गया।

मेहनती व्यक्ति अपने सभी कार्यों को अपनी निर्धारित योजना के अनुसार पूरा करने के लिए विस्तृत योजना बनाते हैं। वर्ष २००९ में डॉ.टेसी थामस अग्नि-४ की परियोजना की निदेशिका बनीं। फरवरी, २०१२ में उनके निर्देशन में अग्नि प्रक्षेपास्त्र का सफल प्रक्षेपण किया गया। इस प्रकार भारत अंतरमहाद्वीपीय बैलिस्टिक प्रक्षेपास्त्रों का विकास करने

में सक्षम अमेरिका, रूस और चीन जैसे देशों की श्रेणी में शामिल हो गया है।

डॉ. थॉमस सेना में महिलाओं को अधिक प्रतिनिधित्व देने का समर्थन करती हैं। वे भारतीय सेना में महिलाओं को युद्ध में भूमिका निभाने का भी समर्थन करती हुई कहती हैं, यदि महिलाएँ इतनी तत्परता से सेना में भूमिका निभा रही हैं, तो वे युद्ध क्षेत्र में भी भूमिका निभा सकती हैं।

लाल बहादुर शास्त्री प्रबंधन संस्थान द्वारा लोक प्रशासन, शिक्षा और प्रबंधन क्षेत्र में किसी व्यक्ति द्वारा किए गए योगदान के लिए लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया जाता है। २०१२ में डॉ. टेसी थॉमस का इस पुरस्कार के लिए चयन किया गया था। यह पुरस्कार उन्हें राष्ट्रपति द्वारा प्रदान किया गया था।

उपसंहार

परिश्रम वह कुंजी है, जो साधारण मनुष्य को भी महान् बना देती है तथा मनुष्य का वास्तविक रूप में उत्थान व विकास करती है। हमारा हर प्रयास जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने की ओर उन्मुख होना चाहिए। अपनी मानसिक सोच को बहुत सकारात्मक रखें। यदि आप सकारात्मक विचार और दृढ़ संकल्प के साथ अग्रसर होते हैं, तो आपको सफलता का मार्ग मिल जायेगा।

अत: जीवन में उन्नति एवं समृद्धि प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि सभी मनुष्य परिश्रमी एवं दृढ़ संकल्पित बनें। और अपने देश तथा समाज को गौरवान्वित करें। ○○○

पृष्ठ १४१ का शेष भाग

था, बहन सो रही थी। अँधेरा होने के कारण हाथ में कुछ बाँध भी नहीं पायी तथा दर्द से चिल्ला भी नहीं पा रही थी। क्योंकि माँ के साथ उसके हाथ में भी ग्रेनाइट की चिंगारी लगी थी तथा दूसरे हाथ से दरवाजे को बंद रखा था। ९ से ९:३० बजे तक हेमाप्रिया की सबसे छोटी बहन अवंतिका ने दरवाजा खोल दिया। उसे लगा उनके पापा आये हैं। तभी हेमाप्रिया आतंकवादी के पैर पकड़कर रोने लगी और उनकी माँ को अस्पताल ले जाने के लिये प्रार्थना करने लगी। माँ की बेहोशी जैसी अवस्था थीं, वे थोड़ा-थोड़ा सुन पा रही थी, पर बात नहीं कर पा रहीं थीं।

इधर अपनी बुद्धिमता का परिचय देते हुए हेमाप्रिया आतंकवादी से बातें करने लगी।

उससे पूछा – आप भारत के हो या पाकस्तिान से?

आतंकवादी बोला – पाकिस्तान के।

तब हेमाप्रिया ने पूछा – क्या मिला है लोगों को मार कर?

आतंकवादी – ताकत मिलती है।

हेमा – आप किनको मारने आये हो?

आतंकवादी – हम हिन्दू-मुस्लिम को मारने आये हैं।

हेमा – क्यों ऐसा करते हो?

आतंकवादी – हमें कश्मीर चाहिए, जो फौजी दे नहीं रहे हैं। इसलिए हम उन्हें मारने आये हैं। सभी परिवार के पिता को मार दिया था। हेमा ने अपनी माँ को ४-५ लीटर पानी पिलाया, तब भी उनको प्यास लग रही थी। हेमा की छोटी बहनों ने अपने माँ को सोने नहीं दिया, जगा कर रखा और आतंकवादी से लड़कर उन्हें पकड़वा दिया।

प्रधानमन्त्री राष्ट्रीय बाल पुरस्कार-२०२२ से हेमा को सम्मानित किया गया। हेमा का जीवन बच्चों को संकट के समय हिम्मत, साहस, बहादूरी तथा समझ-बूझ से विकट से विकट समस्या का समाधान करने की प्रेरणा देती है।

○○○

यदि तुम स्वयं को भगवान के चरणों में समर्पित कर दो, तो भगवान ही तुम्हारे भविष्य के बारे में चिन्ता करेंगे। भगवान हमारे बिल्कुल अपने हैं। तुम उन पर जोर-जबरदस्ती भी कर सकते हो।

निरन्तर भगवान का नाम लेते रहो। भगवन्नाम कलियुग में बड़ा प्रभावशाली है। इस युग में योगाभ्यास करना तो सम्भव नहीं है, क्योंकि मनुष्य के प्राण अन्न पर निर्भर है। ताली बजाते हुए भगवान का नाम-कीर्तन करते रहो। तुम्हारे पाप पक्षियों की भाँति उड़ जायेंगे।

– श्रीरामकृष्ण देव

श्रीरामकृष्ण-गीता (१९)

स्वामी पूर्णानन्द, बेलूड़ मठ

(स्वामी पूर्णानन्द जी रामकृष्ण संघ के वरिष्ठ संन्यासी हैं। उन्होंने २९ वर्ष पूर्व में इस पावन श्रीरामकृष्ण-गीता ग्रन्थ का शुभारम्भ किया था। इसे सुनकर रामकृष्ण संघ के पूज्य वरिष्ठ संन्यासियों ने इसकी प्रशंसा की है। विवेक-ज्योति के पाठकों के लिए बंगला भाषा से इसका हिन्दी अनुवाद रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर के स्वामी कृष्णामृतानन्द जी ने की है। – सं.)

ईश्वरीयः कथाप्रश्नः सम्यगालोचितो यदि।
त्यक्त्वा यान्ति तु तत् स्थानं यत्र कथा मृषार्थका।।१२।।

– यदि ईश्वरीय कथा-प्रसंग की चर्चा होती है, तो वे लोग उस स्थान का त्यागकर जहाँ निरर्थक चर्चा होती है, वहाँ चले जाते हैं।।।१२।।

बद्धा जालेन सन्तोऽपि न चेष्टन्ते पलायितुम्।
केचिन्मीना वरं तत्रावतिष्ठन्ते यथासुखम्।।१३।।

– जिस प्रकार कुछ मछलियाँ जाल में बद्ध होने पर किसी प्रकार भी भागने की कोशिश या चेष्टा नहीं करती अपितु वहाँ अर्थात् जाल में सुख से अवस्थित रहती हैं।।१३।।

कुर्वन्त्युल्लम्फनं तेषां केचित् निर्गमनाय तु।
तथापि जालसंबद्धास्ते नार्हन्ति पलायितुम्।।१४।।

– फिर कुछ (मछलियाँ) भागने के लिए उछलकूद करती हैं परन्तु (फिर भी) जाल में बद्ध होने के कारण वे भाग नहीं सकती।।१४।।

जालं छित्त्वा पलायन्ते ततः केचित् सदैव ते।
तथैवात्रापि संसारे त्रिविधा हि स्वभावतः।
जीवाश्च खलु विद्यन्ते बद्धा मुक्ता मुमुक्षवः।।१५।।

– फिर कुछ मछलियाँ हमेशा ही जाल छेदन करके भाग जाती हैं। यह संसार में जीव भी उसी प्रकार स्वभाव से ही अवश्य तीन प्रकार के है – बद्ध, मुमुक्षु एवं मुक्त।।१५।।

(क्रमशः)

रामकृष्ण मठ,
धन्तोली, नागपुर का
नया प्रकाशन
'श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण'

रामकृष्ण मठ, नागपुर द्वारा 'श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण' (मूल संस्कृत सहित हिन्दी-अनुवाद) नामक पुस्तक तीन खण्डों में चित्रों सहित नये कलेवर में प्रकाशित हो रही है। प्रसिद्ध साहित्याचार्य स्व. चन्द्रशेखर शास्त्री, पटना, बिहार द्वारा अनूदित पुस्तक का यह पुनर्प्रकाशन है। इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में 'बालकाण्ड और अयोध्याकाण्ड'; द्वितीय खण्ड में अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड और सुन्दरकाण्ड; तृतीय खण्ड में युद्धकाण्ड और उत्तरकाण्ड संगृहीत हैं। दिनांक 10 फरवरी, 2023 तक प्रकाशनपूर्व (Pre-publication Price) कीमत रु.1500/- निर्धारित की गई है (इसमें पोस्टेज खर्चा भी सम्मिलित है)। दिनांक 21 फरवरी, 2023 को श्रीरामकृष्णदेव की जयन्ती पर पुस्तक का विमोचन होगा।

पुस्तक विमोचन के बाद कीमत रु.1800 (+ पोस्टेज) होगी। प्रकाशनपूर्व छूट हेतु 10 फरवरी, 2023 से पहले **प्रकाशन विभाग, रामकृष्ण मठ, धन्तोली, नागपुर-440012** से सम्पर्क करें ।

कृपया क्रय राशि हमारे अकाउण्ट में जमा करने के बाद अपना नाम, पता, पिन कोड और मोबाईल नम्बर तथा लेन-देन का विवरण (Transaction detail) rkmnpb@gmail.com द्वारा अथवा व्हाट्सएप नम्बर 88062-91342 पर हमें अवश्य भेजें।

ACCOUNT DETAILS
State Bank Of India, **Branch** - Ramdas peth, Nagpur
A/c of Ramkrishna Math Public Departm, Nagpur
A/c No. - 11072617870, **Branch Cod**e -01633
IFC Code - SBIN0001633, **CIF Code** - 80866227920
MICR Code - 440002003.

प्रबन्धक, प्रकाशन विभाग,
रामकृष्ण मठ, नागपुर

आध्यात्मिक जिज्ञासा (८५)

स्वामी भूतेशानन्द

– विदेश में तो कई स्थानों से नये केन्द्र खोलने के लिए आवेदन आ रहे हैं और केन्द्र खोला गया है।

महाराज – हमलोग केन्द्र खोल भी रहे हैं। नहीं खोल रहे हैं, ऐसी बात नहीं है। जैसे फ्रांस, स्वीटजरलैंड, रूस में केन्द्र खोला गया है, ये सब बाद में हुआ है। जापान हुआ है। आवेदन तो आस्ट्रेलिया से भी आया है और भी बहुत स्थानों से आवेदन आ रहे हैं। ब्राजील में नहीं हुआ है। (बाद में आस्ट्रेलिया, ब्राजील और नेपाल में केन्द्र स्थापित हुआ है।) किन्तु दक्षिण अमेरिका के अर्जेन्टिना में हुआ है। वह ठाकुर के सन्तानों के रहते-रहते ही हुआ है।

– यहाँ एक बात है कि ठाकुर की सन्तानों के रहते-रहते अमेरिका या यूरोप में जितने केन्द्र हुए हैं, बाद में उनका उतना विस्तार नहीं हुआ। अर्थात् उस प्रकार से विस्तार नहीं हुआ। अमेरिका में ही १२ या १३ केन्द्र हुए हैं तथा और भी हो रहे हैं। उसी प्रकार यदि अन्य प्रान्तों में होता –

महाराज – अभी हमलोगों की बाहर केन्द्र बढ़ाने की ओर दृष्टि नहीं है। अभी हमलोग यही सोचकर चिन्तित हैं कि चलायेंगे कैसे? इस डर से हमलोग नये केन्द्र नहीं खोल रहे हैं। उस समय तो बहुत कम केन्द्र थे, कुछ केन्द्र थे। अभी तो केन्द्र बहुत बढ़ गये हैं।

– नहीं। अमेरिका में १२ केन्द्र हुए हैं और भी हो रहे हैं। उसी शृंखला में उसके प्रभाव से एक नये देश में नया केन्द्र हुआ है।

महाराज – वह हुआ है जैसे फ्रांस में हुआ है, रूस में हुआ है स्वीटजरलैंड में हुआ है।

– आनुपातिक दृष्टि से –

महाराज – आनुपातिक दृष्टि से कुछ नहीं कहाँ जा सकता। उस समय केवल ठाकुर की सन्तानों के उत्साह से ही केन्द्र हुए हैं, ऐसी बात नहीं है। स्थानीय भक्तों के आग्रह पर भी आश्रम हुआ है। अभी वैसा आग्रह रहने पर भी उस आश्रम को ग्रहण करना सम्भव नहीं हो पा रहा है।

महाराज – हाँ ! वैसा ही है। किन्तु साधुओं की संख्या बढ़ी है। प्रत्येक केन्द्र में कार्य-विस्तार भी बहुत हो गया है। सब जगह से माँग रहे हैं – लोग दीजिए, लोग दीजिए। हमलोग दे नहीं पा रहे हैं। इसलिए उस दृष्टि से मर्यादा का अतिक्रमण हो रहा है।

– चारों ओर हमलोगों के कार्यों की प्रशंसा हो रही है कि रामकृष्ण मिशन बहुत अच्छा कार्य कर रहा है। आपने पहले कहा था कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सरकार हमलोगों को रुपये दे रही थी। उनका विश्वास था कि रामकृष्ण मिशन को रुपये देने से उसका सदुपयोग होगा। अभी भी उनको प्राण-पण से यह विश्वास है। विभिन्न संस्थाएँ रामकृष्ण मिशन को रुपये देती हैं, जिससे ये लोग अच्छा काम करें। किन्तु बात यह है कि इतना काम हो रहा है, उससे ठाकुर के 'शिवभाव से जीवसेवा' का आदर्श हमलोग कितना सार्थक कर सके हैं?

महाराज – यह तो व्यक्तिगत बात है। जो लोग कार्य कर रहे हैं, उनकी यदि इस विषय में सजगता रहे कि इससे हमलोग शिवभाव से जीवसेवा कर रहे हैं, तभी यह सार्थक है। ऐसा नहीं होने पर इससे हम लोगों की सामाजिक स्वीकृति होगी, हमलोग लोक-समाज में स्वीकृति पायेंगे, किन्तु उससे हमलोगों की आध्यात्मिक उन्नति नहीं होगी।

– जिसके फलस्वरूप आज सुना जा रहा है कि रामकृष्ण मिशन बहुत अच्छा काम कर रहा है।

महाराज – क्योंकि जो साधु हैं, उनको अन्य कोई प्रयोजन नहीं है, वे स्वार्थ-भावना से काम नहीं करते हैं, ठाकुर-स्वामीजी का कार्य है, इस भावना से ही करते हैं। इसलिए उस कार्य में बहुत समर्पण है। अर्थात् इनकी कार्य ठीक करने में रुचि है, जो वेतन प्राप्त कर्मचारियों में नहीं होती है। इसीलिए हमलोग स्वीकृति प्राप्त कर रहे हैं। किन्तु यह स्वीकृति हमलोगों को विपरीतमुखी न कर दे। इस सम्बन्ध में हमलोगों को सावधान रहना होगा, जिससे हमलोग अपने आदर्श को पकड़े रह सकें। कई बार लगता है

कि अब कार्य करना कठिन हो गया है। दूसरी ओर सरकार का हस्तक्षेप बढ़ा है। उस समय सरकार हमलोगों के कार्यों के प्रति उदासीन थी। अभी जो कार्य हमलोग करते हैं, उस पर सरकार की दृष्टि रहती है। सरकार की प्रशंसा होती है कि नहीं, इसीलिये। हमलोगों के कार्यों की क्षति इसलिये हो रही है, वे लोग जहाँ कहते हैं, जैसे कहते हैं, अधिकांश वैसे ही कार्य करना पड़ रहा है।

– एक समय आप रिलीफ सेक्रेटरी थे। उस समय के राहत-कार्य और इस समय के राहत-कार्य में गुणवत्ता की दृष्टि से क्या बढ़ा है? क्योंकि परिमाणगत दृष्टि से तो बढ़ा है।

महाराज – हाँ, बहुत बढ़ा है।

– किन्तु गुणवत्ता की दृष्टि से हमलोगों के कार्यों का जो विकास हो रहा है, उसे देखकर क्या लग रहा है आपको?

महाराज – उस प्रकार देखने से कहना होगा कि गुणवत्ता की दृष्टि से हमलोगों में अधिक अन्तर हुआ है, ऐसा नहीं है। परन्तु कार्य का विस्तार हुआ है और हमलोगों की कार्यक्षमता बढ़ी है। कार्य हेतु व्यवस्था आदि बढ़ी है। किन्तु आदर्श की ओर अधिक बढ़ा है, ऐसा नहीं लगता और अधिक कम हुआ है, यह भी नहीं कह सकता। उस समय हमलोगों का कार्य बहुत सीमित था। अभी विशाल हो गया है। उस कार्य के कारण ही हमलोगों को लोगों की नियुक्ति करनी पड़ रही है, वेतन देकर भी कर्मचारियों की नियुक्ति करनी पड़ रही है। विशेषकर पुनर्वासन कार्य के लिये। यही समस्या हो रही है।

– यह तो ठीक ही हो रहा है। लोगों द्वारा प्रशंसा भी हो रही है। किन्तु लोग कह रहे हैं कि तात्कालिक त्राण-कार्य में रामकृष्ण मिशन उतना आगे नहीं जा पा रहा है।

महाराज – यह गलत धारणा है। हमलोगों की कठिनाई यह है कि कार्य को ठीक से करने के लिए एक समूह को अलग से नहीं रखते हैं। अर्थात् रख नहीं सकते हैं। विभिन्न आश्रमों से सेवकों का संग्रह करना पड़ता है। वे सब अन्य कार्यों में संलग्न हैं। सामयिक रूप से उन सब कार्यों को छोड़वाकर त्राण-कार्य में उन्हें लगाना पड़ता है। इसीलिए समय लगता है। लोग शीघ्रता से करने को व्यग्र रहते हैं। दूसरे संगठनों की अन्य कार्यों में इतनी व्यस्तता नहीं रहती है। ये लोग चले जाते हैं। वहाँ जाकर कुछ दिन कार्य करते हैं और वापस चले आते हैं। समाज में स्वीकृति हुई – देखो, इन लोगों का कितना अच्छा कार्य है, साथ-साथ तुरन्त त्राण-कार्य करते हैं। हमलोगों को लगता है कि क्या साथ-साथ तुरन्त त्राण-कार्य करने से ही पर्याप्त कार्य हुआ? कार्य-धारा के अनुसार जिससे ठीक-ठीक कार्य हो, ठीक-ठीक लोग वर्तमान और भविष्य में लाभान्वित हों, इसे देखना होगा। इस विषय पर हमलोग जितना प्रयास करते हैं, उतना दूसरे लोग नहीं करते। **(क्रमशः)**

पृष्ठ १४० का शेष भाग

महादेव हैं। पहले सोचा कि आँखों का भ्रम है; अच्छी तरह पोंछकर फिर देखा।[२२] बाद में ठाकुर ने इस घटना का उल्लेख करते हुए कहा, ''मथुर की कुंडली में लिखा था कि उसके इष्ट की उसके ऊपर इतनी कृपा दृष्टि होगी कि वे शरीर-धारण करके उसके साथ-साथ डोलेंगे, उसकी रक्षा करेंगे।[२३]

मथुरबाबू श्रीरामकृष्ण के इस आकर्षण की उपेक्षा नहीं कर पाए। इसीलिए तो हम देखते हैं कि इतने विशाल ऐश्वर्य के अधिकारी और विपुल क्षमता में अधिष्ठित होते हुए भी मथुर 'षडैश्वर्यविहीन' श्रीरामकृष्ण की सेवा में लगातार चौदह बरस तन-मन-वचन-धन-ऐश्वर्य सबके द्वारा निरत रहे।

अन्त में १२७८ बंगाब्द (१८७१ ई.) के आषाढ़ मास में मथुर मृत्युशय्या पर पड़ गए। श्रीरामकृष्ण प्रतिदिन दक्षिणेश्वर में हृदय को देखने को भेजते। अन्त में वह भी बन्द हो गया। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में ध्यानमग्न हैं और मथुर जानबाजार में अन्तिम यात्रा कर रहे हैं। दो-तीन घंटे बीत गए। ५ बज गए। श्रीरामकृष्ण का भाव भंग हुआ, बोले, ''श्री जगदम्बा की सखियों ने मथुर को आदरपूर्वक दिव्य रथ पर उठा लिया, उसका तेज श्रीदेवीलोक को चला गया।''[२४] **(क्रमशः)**

सन्दर्भ ग्रन्थ – १. श्रीमद्भागवतम् १०/२१/१३ **२.** वही, १०/२१/१५ **३.** श्रीरामकृष्ण कथामृत, पृ. ५६२ **४.** वही, पृ. ५६९ **५.** वही, पृ. ८१२ **६.** वही, पृ. १२५७ **७.** श्रीमद्भागवतम् १०/३/२-३ **८.** श्रीरामकृष्ण लीलाप्रसंग (बंगला), पूर्वकथा और बाल्य जीवन, पृ. ३७ **९.** श्रीमद्भागवतम् १०/९/२ **१०.** लीलाप्रसंग, साधकभाव, पृ. ५० **११.** श्रीरामकृष्ण भक्तमालिका, द्वि. भाग, पृ. ४२५-२६ **१२.** वही पृ. ४२६ **१३.** वही, पृ. ४२७ **१४.** वही **१५.** श्रीमद्भगवत-गीता ९/११ **१६.** बृहदारण्यक उ. ३/७/१५ **१७.** भक्तमालिका, द्वि. भाग, पृ. १३५ **१८.** वही, पृ. १३६ **१९.** वही, पृ. १३८ **२०.** वही **२१.** वही, पृ. १३९ **२२.** वही, पृ. १४२ **२३.** वही **२४.** वही, पृ. १५३

श्रीरामकृष्ण की नारियों के प्रति सहृदयता

मीनल जोशी, नागपुर

जगत जननी के पुत्र श्रीरामकृष्ण ने श्रीसारदा देवी की षोडशी पूजा की थी। वे सभी नारियों को जगदम्बा के रूप में ही देखते थे। उनकी नारियों के प्रति सहृदयता और स्नेह का हम इस लेख के माध्यम से अनुध्यान करेंगे।

एक रविवार को दक्षिणेश्वर में एक निर्धन महिला ठाकुर के लिये चार रसगुल्ले लेकर आई, परन्तु ठाकुर के कमरे में इतने भक्त जमा थे कि वह उनके पास जाने का साहस नहीं कर सकी। वह नौबत के बरामदे में आकर करुणाभाव से रोने लगी। एकाएक उसके रोते समय ही, ठाकुर गंगा की ओर वाले गोल बरामदे में आ गए। कुछ मिनट तक वे गंगा की ओर निहारते रहे और फिर तेजी से नौबत की ओर चले आए। उस महिला के पास जाकर कहने लगे, ''मुझे बड़ी भूख लगी है। क्या तुम मुझे कुछ खाने को दे सकती हो?'' उस गरीब महिला ने अतिशय आनन्दित होकर वे चारों रसगुल्ले ठाकुर को दे दिये। वे चटखारे लेते हुए उन रसगुल्लों को खाकर अपने कमरे में वापस चले गए।

नवगोपाल घोष की पत्नी निस्तारिणी घोष एक बार काशीपुर उद्यान भवन में गईं। परन्तु चढ़कर वे ठाकुर के समीप नहीं जा सकीं। उन्होंने कुछ समय तक प्रतीक्षा की। तब श्रीठाकुर ने एक आदमी के हाथ अपना एक चित्र भेजकर संदेश दिया, ''आज इसी चित्र को देखकर उसे सन्तुष्ट हो जाने को कहो।'' बाद में उन्होंने निस्तारणी देवी को उसी चित्र की ओर संकेत करते हुए बताया था, 'यह चित्र रेलगाड़ी और समुद्री स्टीमर तथा यात्रियों के साथ अनेक स्थानों की यात्रा करेगा।''

इस प्रकार श्रीरामकृष्ण भक्त-महिलाओं की मनोकामनाएँ पूर्ण करते थे। वे जब कभी कलकत्ता आते, तब भक्तों के घर की नारियों का आतिथ्य अवश्य ही स्वीकार करते थे। उन्हें दर्शन देकर उनके साथ वार्तालाप करते थे। उन्हें मार्गदर्शन कर उन्हें कृतार्थ करते थे। जैसाकि श्रीठाकुर ने लक्ष्मी दीदी से कहा था, ''यदि भगवान का स्मरण हो, तो मेरा चिन्तन करना, उसी से हो जाएगा।''

अघोरमणि देवी – गोपाल की माँ, श्रीरामकृष्ण देव को गोपाल के रूप में देखती थीं।

एक भक्त महिला (सम्भवत: योगीन माँ) कहती हैं, ''हम (महिला भक्तों) को श्रीरामकृष्ण देव सामान्यत: पुरुष नहीं प्रतीत होते थे। ऐसा लगता था, वे हम लोगों में से ही एक थे। इसलिये उनकी उपस्थिति में हममें थोड़ी भी लज्जा और संकोच का भाव नहीं रहता था। वे पुरुषों की भाँति ही महिलाओं से प्रेम भाव रखते थे। हमारा ठाकुर के प्रति कैसा आकर्षण रहता था !''

नवगोपाल घोष की पत्नी निस्तारिणी घोष

श्रीरामकृष्ण देव की भक्त-महिलाओं के प्रति सहृदयता और करुणा अनेक प्रसंगों में प्रकट होती है।

एक दिन कुछ भक्त महिलाएँ दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के दर्शन हेतु उपस्थित हुईं। कुछ समय वार्तालाप हुआ। श्रीरामकृष्ण ने भक्त महिलाओं को भोजन के बारे में पूछा। तब पता चला कि वे उपवास हैं। उनका व्रत होने के कारण उन्होंने कुछ भी ग्रहण नहीं किया है। श्रीठाकुर यह जानकर अत्यन्त व्यथित हुए और कहने लगे कि वे नारियों को इस प्रकार उपवास नहीं देख सकते। (वे जगदम्बा-स्वरूपिणी हैं।) उन्होंने भक्त महिलाओं को अत्यधिक कठोर व्रत पालन करने से मना किया तथा उन्हें कुछ खिलाकर ही श्रीठाकुर का मन शान्त हुआ।

श्रीरामकृष्ण-वचनामृतकार श्री'म' लिखते हैं – ''एक दिन दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए मोहिनीमोहन से बातचीत कर रहे हैं। लड़के के निधन होने से उनकी स्त्री एक तरह से पागल-सी हो गई है। कभी रोती है, कभी हँसती है। श्रीरामकृष्ण के पास आकर कुछ शान्त हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण : तुम्हारी स्त्री इस समय कैसी है?

मोहिनीमोहन : यहाँ आने ही से शान्त हो जाती है। वहाँ तो कभी-कभी बड़ा उत्पात मचाती है। अभी उस दिन मरने पर तुली हुई थी।

श्रीरामकृष्ण सुनकर कुछ देर सोचते रहे।

मोहिनीमोहन ने विनयपूर्वक कहा, ''आप एक-दो बातें बता दीजिए।''

श्रीरामकृष्ण : ''उससे भोजन न पकवाना। इससे सिर और भी गरम हो जाता है और साथ-साथ आदमी रखे रहना।'' बाद में श्रीरामकृष्ण अन्य भक्तों से बातचीत करने लगे। इस बातचीत के बीच में श्रीरामकृष्ण एकाएक मोहिनीमोहन की स्त्री से कहने लगे, ''अकाल मृत्यु के होने पर स्त्री प्रेतनी होती है। सावधान रहना। मन को समझना। इतना देख-सुन कर भी अन्त में क्या यही चाहती हो?''

बिदा लेते समय मोहिनीमोहन की पत्नी ने नौबतखाने में 'श्रीमाँ' के पास रहने का अनुरोध किया। जिसे श्रीरामकृष्ण ने उन्हें सावधान कर, सहृदयता से रहने की अनुमति दे दी।

इसी प्रकार श्रीरामकृष्ण ने श्री'म' की शोकातुर पत्नी का शोक दूर किया था। श्री'म' के आठ वर्ष के लड़के का देहान्त हो गया था। उसकी स्त्री पागल-सी हो गई थी। श्रीरामकृष्ण उस समय काशीपुर उद्यानगृह में रहते थे। श्रीरामकृष्ण श्री'म' की पत्नी को कभी-कभी श्रीमाँ के पास रहने के लिये कहते थे। जब श्रीमाँ श्रीरामकृष्ण को भोजन करातीं, तब उनके साथ श्री'म' की पत्नी भी रहती थी। श्रीरामकृष्ण उनके साथ कुछ देर बात करते थे, जिससे निकुंजदेवी के मन को सांत्वना मिलती थी। इस प्रकार श्रीरामकृष्ण भक्त महिलाओं की चिन्ता करते थे, उन्हें सान्त्वना देते थे। उनसे स्नेहपूर्वक बातें करते थे। अत: श्रीरामकृष्ण के कृपापात्र केवल भक्त-पत्नियाँ अथवा भक्त-महिलाएँ ही नहीं थीं, वरन् दक्षिणेश्वर में सफाई करनेवाली वृन्दा सेविका से लेकर अभिनेत्री-विनोदिनी, रानी रासमणी तक सभी नारियाँ उसमें सम्मिलित थीं।

एक बार अभिनेत्री विनोदिनी श्रीरामकृष्ण की कठिन

व्याधि की बात सुनकर उन्हें देखने के लिए व्याकुल हो उठी। किन्तु उस समय श्रीरामकृष्ण के पास नए लोगों तथा बिल्कुल अनजान लोगों का आना निषेध था। श्रीयुत कालीपद घोष से अभिनेत्री विनोदिनी परिचित थी। अत: गुप्त रूप से सलाह करके एक दिन सन्ध्या से पहले उसे पुरुष की वेशभूषा (साहब लोगों का हैट-कोट) पहना कर कालीपद घोष श्यामपुकुर ले आए। अपने मित्र के रूप में उन्होंने विनोदिनी का परिचय कराया। निरंजन (स्वामी निरंजनानन्द जो द्वारपाल थे) ने मित्र समझ कर उन्हें छोड़ दिया। कालीपद घोष और अभिनेत्री विनोदिनी श्रीरामकृष्ण के सम्मुख पहुँचे। वहाँ विनोदिनी का यथार्थ परिचय कराया गया। सब वृत्तान्त जानकर, विनोदप्रिय श्रीरामकृष्ण हँसने लगे और उसके साहस और बुद्धिमानी की प्रशंसा करते हुए उसकी श्रद्धा-भक्ति देखकर बहुत प्रसन्न हुए। तदन्तर विनोदिनी से ईश्वर पर विश्वास करके उनकी शरण में रहने के लिये दो-चार धर्म की बातें कहकर थोड़ी देर में उसे विदा कर दिया। वह भी आँसू बहाते हुए उनके चरणों में माथा टेककर कालीपद घोष के साथ चली गई।

अभिनेत्री विनोदिनी

श्रीरामकृष्ण के समक्ष कुलवधुओं का नि:संकोच व्यवहार होता था। वे उनके साथ नौका में बैठकर कलकत्ते से दक्षिणेश्वर तथा उत्सवों में जाती थीं। वे नि:संकोच होकर श्रीरामकृष्ण से अपने हृदय की बातें कहती थीं। श्रीरामकृष्ण से धैर्य और उत्साह पाकर बाजार में जाकर भक्तों के भोजन हेतु सब्जियाँ खरीदती थीं। श्रीरामकृष्ण, गौरी-माँ को भद्र समाज की महिलाओं की सभा में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित करते थे।

एक दिन दक्षिणेश्वर में उषाकाल में गौरी-माँ पुष्पचयन में लगी हुई थीं। ऐसे समय श्रीठाकुर अपने बाएँ हाथ से नौबत के पास वाले बकुल वृक्ष की शाखा को पकड़े, दाहिने हाथ में लिये पात्र में से पानी डालते हुए गौरी-माँ से कहने लगे ''मैं पानी डालता हूँ, तू मिट्टी सान।'' विस्मित होकर गौरी-माँ बोली, 'यहाँ पर मिट्टी है कहाँ जो सानूँ? सभी ओर कंकड़ ही तो है।'' ठाकुर हँसते हुए बोले ''मैंने कहा कुछ और, तूने समझा कुछ और। इस प्रदेश की माताओं को बड़ा कष्ट है, तुझे उनके बीच कार्य करना होगा।'' निर्जनप्रिय गौरी-माँ कह उठीं, '.... मुझे कुछ लड़कियाँ दे दो, मैं उन्हें हिमालय में ले जाकर उनका जीवन गढ़ दूँगी।'' परन्तु ठाकुर ने हाथ हिलाते हुए कहा, ''नहीं जी, नहीं, इसी शहर में बैठकर काम करना होगा। साधन-भजन बहुत हुआ, अब इस जीवन को माताओं की सेवा में लगा दे, बड़ा कष्ट है उन्हें।''

परवर्तीकाल में गौरी-माँ ने विख्यात नेताओं को लेकर 'सलाहकार-सभा' का गठन किया तथा शिक्षित महिलाओं को लेकर एक 'महिला समिति' बनाई। व्रतधारी आश्रम-सेविकाओं को लेकर 'मातृसंघ' का गठन किया। गौरी-माँ ने श्रीसारदा देवी के मार्गदर्शन में 'श्रीसारदेश्वरी आश्रम' का भी संचालन किया।

आज के परिप्रेक्ष्य में, वर्तमान में श्रीरामकृष्ण का नारियों के प्रति व्यवहार उतना ही महत्त्वपूर्ण और अनुकरणीय है।

आज इक्कीसवीं सदी की नारियों ने सभी क्षेत्रों में अपना स्थान बनाया है। फिर भी समाज में उनकी अवहेलना होती है। यह अत्यन्त दुखद है। समाज में महिलाओं के प्रति सम्मान का वातावरण होना चाहिए। नारियों को भी एक-दूसरे के प्रति सहृदयता व्यक्त करनी चाहिए, तभी हम यथार्थ रूप में श्रीरामकृष्ण देव के स्नेहमय हृदय का अनुध्यान कर सकेंगे। यही सच्चे अर्थ में श्रीरामकृष्ण देव की, श्री जगदम्बा की यथार्थ पूजा होगी। ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ : १. श्रीरामकृष्ण देव – जैसा हमने उन्हें देखा, लेखक : स्वामी चेतनानन्द **२.** श्रीरामकृष्ण-लीलाप्रसंग, भाग-२, लेखक : स्वामी गम्भीरानन्द **३.** श्रीरामकृष्ण-वचनामृत, भाग-२, लेखक – श्री'म'।

रामराज्य का स्वरूप (८/१)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार थे। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज थे। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में १९८९ में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन स्वर्गीय श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द जी ने किया है। – सं.)

राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं।।
७/२१/०

श्रद्धेय स्वामीजी महाराज, उपस्थित देवियो और बन्धुओ, पिछले सात दिनों से हम सब रामराज्य का चिन्तन करते चले आ रहे हैं। जिस रामराज्य की प्रशंसा करते हुए गोस्वामीजी ने यह लिखा कि रामराज्य में काल, कर्म, स्वभाव और गुणजन्य जो दु:ख है, उनका सर्वथा अभाव हो चुका था। इस दोहे को पढ़कर प्रत्येक व्यक्ति के मन में यह इच्छा होना स्वाभाविक है कि क्या हमारे जीवन में भी ऐसी स्थिति सम्भव है? तो इसका उत्तर यह है कि यह असम्भव नहीं है। त्रेता युग में भगवान राम अवतरित होकर मानवीय पद्धति से जब रामराज्य की स्थापना करते हैं, तो इसका अर्थ ही यह है कि रामराज्य असम्भव नहीं है, सम्भव है। पर रामराज्य की स्थापना के लिए दो महान भूमिकाओं की आवश्यकता है। यदि वे दोनों भूमिकाएँ हमारे अन्त:करण में ठीक-ठीक सम्पन्न होती हैं, तो हमारे व्यक्तिगत जीवन में रामराज्य की स्थापना होती है और यदि कोई इतना सक्षम महापुरुष हो, जो उस व्यक्ति के भाव से अनुभव किए हुए सत्य को वह अपनी साधना के द्वारा, तपस्या के द्वारा, एकाकारता की वृत्ति के द्वारा सारे समाज में उसे क्रियान्वित कर सके, तो समाज में भी रामराज्य की सम्भावना है। यह कार्य त्रेता युग में सम्भव हुआ। उसमें श्रीभरत और श्रीराम की भूमिका क्या है? विशेष रूप से श्रीभरत की भूमिका पर हम विचार कर रहे हैं।

उस समय अयोध्या में धर्म के सम्बन्ध में सबसे बड़े प्रमाण गुरु वशिष्ठ ही माने जाते थे। गुरु वशिष्ठ ही धर्म के व्याख्याता थे। किन्तु श्रीभरत ने उनकी धारणाओं को, बिना उनको अपमानित किए, बिना उन्हें नीचा दिखाए, उसे परिवर्तित किया। यह श्रीभरत के व्यक्तित्व की विलक्षणता है। गोस्वामीजी ने इस बात की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। जब भक्त शिरोमणि श्रीभरत और महर्षि भरद्वाज का मिलन होता है तो महर्षि भरद्वाज ने श्रीभरत के यश की तुलना चन्द्रमा से की। संस्कृत साहित्य में यश के लिए चन्द्रमा की उपमा बार-बार दी गई है। क्योंकि चन्द्रमा में प्रकाश है, शीतलता है, चन्द्रमा की किरणें प्रत्येक व्यक्ति को प्रिय प्रतीत होती हैं। ठीक इसी प्रकार से यशस्वी व्यक्ति को चन्द्रमा के समान लोकप्रिय होना चाहिए। जिसके प्रति प्रत्येक व्यक्ति के अन्त:करण में आकर्षण हो, ऐसा यशस्वी व्यक्ति ही धन्य है। चन्द्रमा की उपमा तो उसके गुणों के सन्दर्भ में दी गई है, पर यह जीवन का यथार्थ सत्य है कि चन्द्रमा में बहुत-सी कमियाँ हैं और जो बहुत-सी कमियाँ चन्द्रमा में हैं, वे भी यशस्वी व्यक्ति के जीवन में दिखाई देती हैं। महर्षि भरद्वाज ने श्रीभरत के यश की तुलना जब चन्द्रमा से की, तो उनसे यह पूछा जा सकता है कि चन्द्रमा तो अनेक दोषों से युक्त है, तो क्या यशस्वी भरत के जीवन में भी ये कमियाँ या दोष विद्यमान हैं? तब इसका उत्तर देते हुए महर्षि भरद्वाज जो कहते हैं, वे पंक्तियाँ बड़ी सारगर्भित हैं। उन्होंने चन्द्रमा की त्रुटियों की ओर संकेत किया और यह बताया कि संसार में यशस्वी व्यक्तियों के जीवन में निश्चित रूप से वह कमी विद्यमान होती है, पर श्रीभरत में वे कमियाँ नहीं हैं। वे पंक्तियाँ आपने पढ़ी होंगी, वे कहते हैं –

नव बिधु बिमल तात जसु तोरा।
रघुबर किंकर कुमुद चकोरा।। २/२०८/१

पहली बात उन्होंने यह कहा है कि यह आवश्यक नहीं है कि यशस्वी व्यक्ति का यश प्रत्येक को प्रिय हो। जिससे

हमारा राग जुड़ा हुआ होता है, जिससे हमारा सम्बन्ध होता है, जिसमें जिसके प्रति अपनत्व होता है, उसके यशस्विता से हम प्रसन्न होते हैं और जिसके प्रति परायापन है, उसकी यश के सम्बन्ध में जब सुनते हैं, तब व्यक्ति को प्रसन्नता होना तो दूर, व्यक्ति दुखी भी हो जाता है, उसको बुरा भी लगता है। महर्षि भरद्वाज ने पहली बार कहा कि एक अद्‌भुत बात है कि भरत का यश अगर भरत के भक्तों को प्रिय हो, तब तो स्वाभाविक है। लेकिन उन्होंने कहा –

नव बिधु बिमल तात जसु तोरा।
रघुबर किंकर कुमुद चकोरा।।

भगवान राम के भक्त कुमुद और चकोर के समान हैं और भगवान राम के ये कुमुद और चकोर के समान भक्त भरत चन्द्र की ओर निहारते हैं। बड़ी विचित्र-सी बात कही गई। इसका अभिप्राय यह है कि भक्त तो श्रीराम के हैं, पर भगवान श्रीराम के भक्तों का आकर्षण श्रीभरत के प्रति इतना है कि भगवान श्रीराम की तुलना में भी वे श्रीभरत के यश को ही अधिक प्रियता से ग्रहण करते हैं। आगे चलकर एक बात और कह दी गई। आकाश में जैसे सूर्य और चन्द्रमा दो हैं, तो इस प्रसंग में महर्षि भरद्वाज ने बड़ी विलक्षण कल्पना की। उन्होंने कहा कि भगवान राम के प्रताप का प्रकाश भी उस समय सारे संसार में फैला हुआ था और भरत के यश चन्द्रमा का प्रकाश भी फैला हुआ था। तो सूर्य के प्रेमी अलग होते हैं और चन्द्रमा के प्रेमी अलग होते हैं। किन्तु यहाँ पर एक अनोखी बात यह है कि सूर्य के प्रेमी कमल और चक्रवाक हैं, पर गोस्वामीजी ने यह कहा कि श्रीराम के भक्तों ने कमल बनने के स्थान पर कुमुद और चकोर बनना स्वीकार किया – 'रघुबर किंकर कुमुद चकोरा।' श्रीराम के भक्त ने कुमुद और चकोर बनकर भरत के यश के चन्द्रमा का जो दिव्य रस है, उसका पान किया। उसका अभिप्राय क्या है? आप इसको सूत्रात्मक रूप में यों अनुभव करें। भगवान श्रीराम ने भी अयोध्या से चित्रकूट की यात्रा की और बाद में श्रीभरत ने भी अयोध्या से चित्रकूट की यात्रा की। अयोध्या के जो नागरिक थे, वे श्रीराम के ही भक्त थे और जैसा कि यह बात आपके सामने पहले भी कही जा चुकी है कि प्रारम्भ में उनके अन्त:करण में भरत के प्रति उपेक्षा की वृत्ति थी। उपेक्षा की वृत्ति से भी बढ़कर उनके मन में किसी न किसी प्रकार के विद्वेष भी भरत के प्रति था। क्योंकि उनको यह भ्रम था कि राम के वन-गमन के लिये जो षड्यन्त्र रचा गया, उसमें भरत का हाथ है। भगवान श्रीराम क्या चाहते हैं? भगवान राम जब अयोध्या के नागरिकों को बीच मार्ग में सोता हुआ छोड़कर चले जाते हैं, तो भगवान श्रीराम का उद्देश्य यह था कि मेरा भक्त बनने में या मेरा अनुगमन करने में वस्तुत: कल्याण नहीं है। कल्याण तो वस्तुत: भरत का अनुगमन करने में ही है। मेरे साथ चलकर आप लोग मेरे साथ नहीं रह पाए, पर भरत के साथ चलकर मुझ तक पहुँचने में, मुझे पाने में सक्षम हुए। इसका अभिप्राय यह है कि भगवान की अपेक्षा भी भक्त का अधिक महत्त्व है। श्रीराम की अपेक्षा श्रीभरत का अधिक महत्त्व है। यदि देखें, तो यह बात यथार्थ भी है कि अयोध्यावासियों को भगवान श्रीराम के साथ चलते हुए भी देवताओं के माया का प्रभाव उनकी बुद्धि पर पड़ गया। वे शरीर से भी थक गये, मन के ऊपर देवताओं के माया का प्रभाव भी पड़ गया और ऐसी स्थिति में वे श्रीराम के सान्निध्य से वंचित रह गये।

यह केवल अयोध्या के नागरिकों का ही सत्य नहीं है, हमारे आपके जीवन का भी सत्य है। हम सब जितने व्यक्ति हैं, जितने प्राणी हैं, सबके पास तो ईश्वर विद्यमान हैं। सब ईश्वर के साथ ही तो हैं। पर ईश्वर के साथ होते हुए भी क्या अन्तर्मन के विकार मिट पाते हैं? हमारे अन्तर्मन में ईश्वर के होते हुए भी काम, क्रोध, लोभ की वृत्तियाँ विद्यमान हैं और हम माया से समवेत हो जाया करते हैं। इसलिए परिवर्तन कौन करेगा? अन्त:करण में परिवर्तन लाने के लिए भगवान की अपेक्षा नहीं, अपितु भक्त की अपेक्षा है। जब कोई भक्त हमें प्राप्त होता है, तो भक्त के सान्निध्य से हमारे जीवन में परिवर्तन आता है। जैसा कि अयोध्यावासियों के जीवन में हुआ। जब गोस्वामीजी यह कहते हैं कि अयोध्या के नागरिक थककर सो गये, तो इसका अभिप्राय क्या हुआ? थकान तो शरीर से ही आती है और कहीं न कहीं देहवृत्ति उनमें विद्यमान है, शरीर की भावना विद्यमान है। नहीं तो वे लोग मन में उमंग लेकर बड़े उत्साह से भगवान राम के पीछे चल रहे थे। पर इतना होते हुए भी वे लोग शरीर के सामने हार गये, शरीर से थक गये, तो इसका अर्थ यही है कि वे शरीर की भावना से मुक्त नहीं थे। किन्तु यही आयोध्या के नागरिक जब श्रीभरत के सान्निध्य में आते हैं, तो शरीर की भावना से मुक्त हो जाने में सक्षम हो जाते हैं। यह संकेत भी आपको रामायण में मिलेगा।

कल चर्चा हुई थी कि अयोध्या के नागरिक पलंग छोड़कर, सुख की सामग्री छोड़कर भगवान श्रीराम की दिशा में चल दिये। लेकिन ऐसा होते हुए भी क्या वे वस्तुओं का त्याग कर पाए? उनके अन्त:करण में उन वस्तुओं के प्रति जो आकर्षण था, उसका त्याग वे नहीं कर पाए। लेकिन श्रीभरत का भाषण जब उन्होंने सुना, देह से ऊपर उठ गये। श्रीभरत के भाषण की विशेषता यह है कि वह व्यक्ति को देह की भावना से ऊपर उठा देता है। उसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिला। श्रीभरत का भाषण समाप्त हुआ और वहाँ श्रीभरत के प्रेम की विजय हुई। वस्तुत: सारे समाज के अन्त:करण में जो एक व्याकुलता थी, उसे श्रीभरत का आश्रय मिला। जब श्रीभरत जी ने यह कह दिया कि –

प्रातकाल चलिहउँ प्रभु पाहीं। २/१८२/२

समस्या का जो समाधान गुरुदेव दे रहे हैं या मंत्रियों ने देने की चेष्टा की या माता कौशल्या ने जिस समाधान का समर्थन किया, मेरी दृष्टि में यह समाधान सही नहीं है। सच पूछिए, तो कौशल्या अम्बा ने वैद्य की भूमिका गुरुवशिष्ठ के लिए निश्चित की थी। कथा में यह बात एक दिन आ चुकी है कि गुरु वशिष्ठ की अपेक्षा श्रीभरत अधिक उत्कृष्ट वैद्य हैं, यह स्पष्ट सिद्ध हो जाता है। दोनों वैद्यों में एक अन्तर है। गुरु वशिष्ठ ने रोग का जो निदान किया, वह दूसरे प्रकार का था। उन्होंने जो दवा बताई, वह दूसरे प्रकार की थी और श्रीभरत ने रोग का जो निदान किया, वह दूसरे प्रकार की थी।

गुरु वशिष्ठ का निदान यह था कि सारी समस्या सत्य को लेकर है। ऐसी स्थिति में अयोध्या को राजा की आवश्यकता है और ऐसी स्थिति में भरत यदि सिंहासन पर बैठ जाते हैं, तो समाज की आवश्यकता की भी पूर्ति होगी और साथ ही महाराज दशरथ ने सत्य की रक्षा के लिए, मर्यादा के लिए, जो त्याग किया है, उस परम्परा का आगे विस्तार होगा। पर श्रीभरत का निदान क्या है? दोनों वैद्यों में एक अन्तर यह है कि श्रीभरत ने जब अयोध्या की राजसभा में भाषण दिया, तो शुरु में तो उन्होंने बड़ी निराशा भरी वाणी में कहा कि अन्यों की बात तो मैं नहीं जानता, पर गुरुदेव की वाणी से मैं ऐसी बातें सुनने की कल्पना भी नहीं कर सकता था। उनका वह जो वाक्य है, जिसमें बड़ी पीड़ा भरे हुए स्वर में उन्होंने कहा –

गुर बिबेक सागर जगु जाना।
जिन्हहि बिस्व कर बरद समाना।। २/१८१/१

हमारे गुरुदेव तो विवेक के समुद्र हैं, यह सारे संसार के व्यक्ति जानते हैं, जिनकी मुट्ठी में सारा विश्व बेर के फल के समान है। सारा ज्ञान जिनकी मुट्ठी में है, ऐसे हमारे गुरुदेव हैं।

मो कहँ तिलक साज सज सोऊ। २/१८१/२

ऐसे गुरुदेव भी जब यह कहते हैं कि भरत, सिंहासन को स्वीकार कर लेने में ही समस्या का समाधान है, तो इससे बढ़कर आश्चर्य और निराशा की बात और क्या होगी ! श्रीभरत का तात्पर्य यह था कि अगर मैं सिंहासन पर बैठ जाता हूँ, तो यह तो लोगों के लिए एक परम्परा बन जायेगी कि चाहे जिस तरह का अनर्थ करके छल-कपट का आश्रय लेकर के सत्ता प्राप्त कर लेना ही सबसे बड़ी सफलता है। बस वहीं से मनुष्य में एक प्रकृति दिखाई देती है कि व्यक्ति धर्म को स्वीकार भी करना चाहता है, तो वहीं से स्वीकार करना चाहता है, जहाँ से उसका स्वार्थ होता है। हम धर्म की चर्चा वहीं से प्रारम्भ करते हैं। दृष्टान्त के रूप में मैं इसे कहना चाहूँगा कि दस डाकूओं ने मिलकर डाका डाला और डाका डालने के बाद जब धन लेकर बैठे, तो कहने लगे, बँटवारा ईमानदारी से होना चाहिए। डाका डालते समय ईमानदारी की आवश्यकता नहीं है, पर बाँटवारे के समय ईमानदारी की आवश्यकता तो है ही।

इसका अभिप्राय यह है कि हम अपने न्यायपूर्ण अधिकार की बात वहीं से शुरू करते हैं, जहाँ से हमारे स्वार्थ का, हमारे अधिकार का समर्थन होता है। श्रीभरत ने कहा कि समस्या का यह समाधान मान लेना कि इस समय राजा के अभाव में प्रजा संत्रस्त होती है, समाज में उच्छृंखलता फैलती है, इसलिए येन केन प्रकारेण किसी व्यक्ति को सिंहासन पर बैठा देना चाहिए, तो इससे बढ़कर बुरी परम्परा और क्या होगी ! जो राजा स्वयं अन्यायपूर्वक राज्य पर अधिकार करेगा, क्या वह प्रजा को न्याय दे सकेगा, न्यायपूर्वक राज्य करेगा, न्याय का प्रसार करेगा? ऐसे राजा से न्याय की आशा करना, इससे बढ़कर अविवेक और क्या होगा? जो स्वयं अन्यायपूर्वक सिंहासन पर बैठकर, सत्ता हस्तगत करके सत्ताधीश बना हुआ बैठा है, वह व्यक्ति तो समाज में न्याय व्यवस्था को ठीक-ठीक संचालित कर ही नहीं सकता। **(क्रमश:)**

विनोदप्रिय श्रीरामकृष्ण

डॉ. अवधेश प्रधान

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

श्रीरामकृष्ण देव को बार-बार समाधि लगती थी। सामान्यावस्था में रहने पर वे सदा ईश्वरीय चर्चा करते रहते थे। ज्ञान, भक्ति, योग आदि की तात्त्विक बातें वे करते थे। किन्तु इसके साथ उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी कि वे सरस थे, विनोदप्रिय थे। वे विनोद में भी बहुत बड़ी-बड़ी बातें कह देते थे, जिससे हँसी और आनन्द की धारा बहने लगती थी। आइये उनके जीवन के कुछ विनोदी प्रसंगों से आनन्द की रसानुभूति किया जाये।

ठाकुर ने कहा, ईश्वर में मग्न हो जाने पर फिर अशुद्धि, पापबुद्धि नहीं रह जाती। एक तान्त्रिक भक्त ने याद दिलाया – आपने कहा है कि 'विद्या का मैं' रह जाता है। ठाकुर ने बात का समर्थन करते हुए कहा – विद्या का मैं, भक्त मैं, दास मैं, अच्छा मैं रहता है। 'बदमाश मैं' चला जाता है। (हँसी) (वही, पृ.२४५)

ठाकुर ने मास्टर महाशय से कहा, 'प्रारब्ध कर्मों का भोग होता ही है। जब तक वह है, तब तक देह-धारण करना ही पड़ेगा।'' फिर इसका उदाहरण भी दिया, ''एक काने आदमी ने गंगा-स्नान किया। उसके सारे पाप तो छूट गए, पर कानापन दूर नहीं हुआ !'' (सभी हँसे) उसे अपना पूर्वजन्म का फल भोगना था, वही वह भोगता रहा। (वही, पृ२८१)

इसी तरह साधु संग से मलिनता दूर होती है, पर कोई-कोई वैसे के वैसे रह जाते हैं। विश्वास बाबू का सारा धन उनकी चरित्रभ्रष्टता की भेंट चढ़ गया, तब उनकी साधु-संग की इच्छा हुई। उनका प्रसंग उठने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, साधु का कमंडलु चार धाम घूम कर आता है, परन्तु वैसा ही कड़ुआ का कड़ुआ रहता है। मलय की हवा जिन पेड़ों को लगती है, वे सब चन्दन हो जाते हैं, पर सेमल, बड़ आदि चन्दन नहीं बनते ! कोई-कोई साधु संग करते हैं गाँजा पीने के लिए ! (हँसी) साधु लोग गाँजा पीते हैं, इसलिए उनके पास आकर बैठते हैं, गाँजा तैयार कर देते हैं और प्रसाद पाते हैं !'' (सभी हँस पड़े) (वही, पृ.१११)

केवल शास्त्रज्ञान से वास्तविक बोध नहीं होता। अधर सेन के घर पर भक्तों से ठाकुर ने कहा, ''कुछ गीता, भागवत और वेदान्त पढ़कर लोग सोचते हैं, हमने सब समझ लिया।'' इसके तुरन्त बाद दृष्टान्त रखा, ''चीनी के पहाड़ पर एक चींटी गई थी। एक दाना खाने से ही उसका पेट भर गया। एक दाना और मुँह में दबाकर वह घर लौट पड़ी। जाते हुए सोच रही थी, अब की बार आकर सारा पहाड़ उठा ले जाऊँगी ! (सब हँसते हैं) (वही, पृ.६६९)

ठाकुर का उपदेश – ''अहंकार करना वृथा है। यह शरीर, ऐश्वर्य कुछ भी न रह जाएगा।'' इतने गम्भीर उपदेश के तुरन्त बाद ठाकुर ही ऐसा विकट उदाहरण दे सकते थे – ''कोई मतवाला दुर्गा की मूर्ति देख रहा था। प्रतिमा की सजावट देखकर उसने कहा – चाहे जितना बनो-ठनो, एक दिन लोग तुम्हें घसीट कर गंगा में डाल देंगे।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.७३१-३२)

श्रीरामकृष्ण ने एक बात बार-बार दुहराई है – सर्वप्रथम ईश्वर का दर्शन ही आवश्यक है, शास्त्र आदि गौण हैं। इस पर उनका प्रसिद्ध दृष्टान्त है – ''बड़े बाबू के साथ परिचय की आवश्यकता है। उनकी कितनी कोठियाँ हैं, कितने बगीचे हैं, कम्पनी का कागज कितने का है, यह सब पहले से जानने के लिये उतावले क्यों हो रहे हो? नौकरों के पास जाते हो, तो वे खड़े भी नहीं रहने देते – कम्पनी के कागज की खबर भला क्या देंगे? परन्तु किसी तरह बड़े बाबू से एक बार मिल भर लो, चाहे धक्के खाकर मिलो और चाहे चारदीवारी लाँघकर; तब उनके कितने मकान हैं, कितने बगीचे हैं, कितने का कम्पनी-कागज है, वे स्वयं बतला देंगे। बाबू से भेंट हो जाने पर नौकर और दरबान सब सलाम करेंगे।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.७५३)

ईश्वर के दर्शन के लिये साधना आवश्यक है – ''दूध जमाकर दही मथोगे, तभी तो मक्खन निकलेगा।'' जो लोग

बिना कुछ किये ईश्वर का दर्शन कर लेना चाहते हैं, उनका उपहास करते हुए ठाकुर कहते हैं – ''यह अच्छी बला चढ़ी, ईश्वर से मिला दो और स्वयं चुपचाप बैठे रहेंगे। मक्खन निकालकर मुँह के पास रखा जाये ! (सब हँसते हैं) अच्छी बला आई, मछली पकड़कर हाथ में रख दी जाये!'' (वही, पृ.७५४)

ज्ञानी और भक्त का अन्तर समझाते हुए श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कहते हैं – ज्ञानी सब कुछ स्वप्नवत् देखते हैं। भक्तगण सभी अवस्थाएँ मानते हैं। ज्ञानी दूध तो देते हैं, पर बूँद-बूँद करके। (सब हँसते हैं) इसके विपरीत भक्त ऐसी गाय है, जो धर-धर दूध देती है – ''कोई कोई गौ ऐसी होती है कि घास चुन-चुनकर चरती है, इसलिये दूध भी थोड़ा-थोड़ा करके देती है। जो गौएँ इतना चुनती नहीं, और सब कुछ, जो आगे आया, खा लेती हैं, वे दूध भी खर्राटे के साथ देती हैं। उत्तम भक्त नित्य और लीला; दोनों ही मानता है। इसलिए नित्य से मन के उतर आने पर भी वह उन्हें सम्भोग करने के लिये पाता है। उत्तम भक्त खर्राटे के साथ दूध देता है ! (सब हँसते है)।

इस पर महिमाचरण ने चुटकी ली – परन्तु दूध में कुछ बू आती है ! (हास्य)। श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए चुटकी का उत्तर दिया – हाँ, आती है। परन्तु कुछ उबाल लेना पड़ता है। ज्ञानाग्नि पर दूध गरम कर लिया जाये, तो फिर बू नहीं रह जाती। (सब हँसते हैं) (वही, पृ.७६२-६३)

ठाकुर ने कहा, चैतन्यदेव ने हरिनाम का प्रचार किया था, इसलिए अच्छा है; अब दृष्टान्त सुनिये, ''कुछ किसान एक न्यौते में गए थे। भोजन करते समय उनसे पूछा गया, तुम लोग आमड़े की खटाई खाओगे? उन्होंने कहा, बाबुओं ने अगर उसे खाया, तो हमें भी देना। मतलब यह कि उन्होंने खाया होगा, तो वह चीज अच्छी ही होगी।''

जब तक ईश्वर की उपलब्धि नहीं होती, तभी तक तर्क, विचार चलता है। ईश्वर-लाभ के बाद यह सब बंद हो जाता है। ठाकुर ने इसके लिये कभी खाली और भरे घड़े का उदाहरण दिया और कभी भोज का। घड़े का उदाहरण हम देख चुके, अब भोज का उदाहरण देखते हैं – ''जहाँ न्योता रहता है, वहाँ शब्द तभी तक सुन पड़ता है, जब तक लोग भोजन करने के लिये बैठते नहीं। तरकारी और पूड़ियाँ आईं नहीं कि बारह आने गुलगपाड़ा घट जाता है (सब हँसते हैं)। दूसरी चीजें ज्यों-ज्यों आती हैं, त्यों-त्यों आवाज घटती जाती है। दही आया कि बस सपासप आवाज रह गई। फिर भोजन हो जाने पर निद्रा। जितना ही ईश्वर की ओर बढ़ोगे, विचार उतना ही घटता जाएगा। उन्हें पा लेने पर फिर शब्द या विचार नहीं रह जाते। तब रह जाती है निद्रा-समाधि।'' (वही, पृ.८७२)

श्रीरामकृष्ण देव सकल-विवाद-भंजन थे और इस क्रम में हास्य-विनोद उनका एक कारगर अस्त्र था। उनका द्वार सबके लिये खुला था। जो लोग आपस में विरोध या विद्वेष या वैमनस्य रखते थे, उन सबको श्रीरामकृष्ण देव के पास आकर स्नेह और अपनापन मिलता था। शरत् पूर्णिमा को जल-विहार के दौरान उन्होंने लक्ष्य किया कि विजयकृष्ण गोस्वामी और केशवचन्द्र सेन संकुचित होकर बैठे हैं। दोनों के बीच समझौता कराते हुए उन्होंने केशव से कहा – ''अजी ! ये विजय आये हैं। तुम लोगों का झगड़ा-विवाद मानो शिव और राम की लड़ाई है। राम के गुरु शिव हैं। दोनों में युद्ध भी हुआ, फिर संधि भी हो गई। पर शिव के भूत-प्रेत और राम के बंदर ऐसे थे कि उनका किचकिचाना रुकता ही न था।'' (सब जोर से हँस पड़े) (वही, पृ.९०)

उनका संकेत ब्राह्म समाज की दलबंदी की ओर था। संगठन में विभाजन और विवाद स्वाभाविक है, यह कहकर उनके बीच की कटुता मिटाते हुए आगे कहा, ''अपने ही लोग हैं। ऐसा होता ही है। लव-कुश ने भी राम के साथ युद्ध किया था। फिर जानते हो न, माँ और बेटी अलग से मंगलवार का व्रत रखती हैं, मानो माँ का मंगल और बेटी का मंगल अलग-अलग है। परन्तु वास्तव में तो माँ के मंगल से बेटी का मंगल होता है और बेटी के मंगल से माँ का। इसी तरह तुममें से एक के एक समाज है, अब दूसरे के भी एक चाहिये। (सब हँसते हैं) पर यह सब आवश्यक है। तुम कहोगे कि जहाँ भगवान् ने स्वयं लीला की, वहाँ जटिला-कुटिला की क्या आवश्यकता थी? पर जटिला-कुटिला के सिवा लीला पुष्ट नहीं हो पाती। बिना उनके रंग नहीं चढ़ता।'' (सब जोर से हँसते हैं।) (वही, पृ.९०)

फिर उन्होंने केशव को समझाते हुए कहा कि ''तुम स्वभाव परख कर शिष्य नहीं बनाते, इसीलिये आपस में इस तरह की फूट हुआ करती हैं।'' मनुष्य ऊपर से एक जैसे हैं, लेकिन सबका स्वभाव अलग है, किसी में सतोगुण अधिक है, तो किसी में रजोगुण तो किसी में तमोगुण। फिर

माहौल को और हलका बनाते हुए उदाहरण दिया, ''गुझियाँ बाहर से एक-सी दिखाई देती हैं, पर किसी के भीतर खोया, किसी के भीतर नारियल, तो किसी के भीतर उड़द की दाल होती है।'' (सब हँसते हैं।) (वही, पृ.९१)

एक दिन सुरेन्द्र ने कहा, ''मेरी समझ में शायद केशव के सम्प्रदाय में अब कोई भी ढंग का आदमी नहीं रह गया है।'' श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए टिप्पणी की ''गोविन्द अधिकारी अपनी नाटक-मंडली में अच्छा आदमी नहीं रखता था, हिस्सा देने का भय जो था।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.४५६)

इस टिप्पणी में ठाकुर का विशुद्ध विनोद भाव ही था; ब्राह्म समाज या उसके किसी गुट या व्यक्ति की निन्दा में उनकी कोई रुचि न थी। ५ अप्रैल, १८८४ को रामचन्द्र दत्त ने केशव चन्द्र सेन और उनके नवविधान की बहुत आलोचना की, ठाकुर ने बार-बार उस प्रसंग को टालने का प्रयास किया। फिर किसी ने कहा, ब्राह्मणगण कहते हैं कि परमहंस देव में संगठन शक्ति नहीं है तो ठाकुर ने बात को टालने के लिए राम से कहा – ''अब यह बतलाओ, मेरा हाथ क्यों टूटा? तुम इसी विषय पर एक लेक्चर दो।''(सब हँसते हैं।) (वही, पृ० ४८५)

अनुचित प्रसंग या चर्चा को टालने का यह एक ढंग था। वैसे प्रयोजनानुसार वे कठिन से कठिन कुतर्क का मुँहतोड़ उत्तर देना जानते थे। बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय को समझाते हुए उन्होंने कहा – ज्ञान प्राप्त होने पर, ईश्वर का दर्शन हो जाने पर, पुनर्जन्म नहीं होता। जैसे कि उबाले हुए धान को खेत में नहीं बोया जा सकता। इस पर बंकिम ने तर्क किया – घास-पतवार से भी तो पेड़ का कार्य नहीं होता। श्रीरामकृष्ण ने तुरन्त प्रतिवाद किया – ज्ञान खर-पतवार नहीं है। ...''उपमा एकदेशी है। तुमने न्यायशास्त्र नहीं पढ़ा। बाघ की तरह भयानक कहने से बाघ की तरह एक भारी दुम या बड़े भारी मुख से अर्थ हो, सो नहीं।'' (सब हँसते हैं।) (वही, पृ.७८६-८७)

शास्त्रज्ञ को शास्त्र के तर्क से पछाड़ना ! आमतौर पर श्रीरामकृष्ण इस अस्त्र का प्रयोग नहीं करते। उनका आजमाया हुआ अपना हथियार है – दृष्टान्त, उदाहरण, कहानियाँ, कहावतें, वे भी ऐसी जो विनोदपूर्ण हों। कहानी लम्बी भी हो सकती है, छोटी भी। श्रीरामकृष्ण ने वैष्णव गोसाई से कहा, नाम के साथ ईश्वर के लिये अनुराग भी चाहिये, केवल नाम लेता जा रहा है, पर चित्त कामिनी-कांचन में है, इससे क्या होगा? अब उदाहरण और कहानी एक में मिलाकर व्याख्या – ''गंगा स्नान से सब पाप मिट जाते हैं सही, पर सब लोग कहते हैं कि वे पाप एक पेड़ पर चढ़े रहते हैं। जब वह मनुष्य गंगाजी से नहाकर लौटता है, तो वे पुराने पाप पेड़ से कूद कर फिर उसके सिर पर सवार हो जाते हैं।'' (सब हँसे) (वही, पृ.१६१)

श्रीरामकृष्ण कहा करते थे, समय न होने पर कुछ नहीं होता। अब उदाहरण और एक छोटी कहानी एक साथ – ''लड़के ने कहा था, माँ, अब मैं सोता हूँ, जब मुझे शौच लगे, तब तुम जगा देना। माँ ने कहा, बेटा, शौच लगने पर तुम स्वयं ही उठ जाओगे, मुझे उठाना न पड़ेगा।'' (वही, पृ.१३५)

श्रीरामकृष्ण हठयोग को अच्छा नहीं मानते थे। इससे केवल शरीर की ओर ध्यान लगा रहता है, ईश्वर की ओर नहीं। इस पर उन्होंने एक कहानी सुनाई – ''एक सुनार था। उसकी जीभ उलट कर तालु पर चढ़ गई थी। तब जड़ समाधि की तरह उसकी अवस्था हो गई। वह हिलता-डुलता न था। बहुत दिनों तक उसी अवस्था में रहा। लोग आकर उसकी पूजा करते थे। कुछ साल बाद एकाएक उसकी जीभ सीधी हो गई। तब उसे पहले की तरह चेतना हो गई। फिर वही सुनार का काम करने लगा।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.२९६)

श्रीरामकृष्ण ने यदु मल्लिक से हँसकर पूछा – तुम इतने चापलूसों को क्यों रखते हो? यदु ने भी हँसते हुए उत्तर दिया – इसलिये कि आप उनका उद्धार करें ! (सभी हँसने लगे।) श्रीरामकृष्ण ने कहा कि 'चापलूस लोग समझते हैं कि बाबू उन्हें खुले हाथ धन दे देता, बाबू से धन निकालना बड़ा कठिन काम है।' फिर उन्होंने एक प्रसिद्ध कहानी सुनाई – एक सियार एक बैल को देख उसका फिर साथ न छोड़े; बैल चरता-फिरता है, सियार भी साथ-साथ है। सियार ने समझा कि बैल का जो अंडकोष लटक रहा है, वह कभी न कभी गिरेगा और उसे वह खाएगा। बैल कभी सोता, तो वह भी उसके पास ही लेटकर सो जाता है और जब बैल उठकर घूम-फिर कर चरता है, तो वह भी साथ-साथ रहता है। कितने ही दिन इसी प्रकार बीते परन्तु वह कोष नहीं गिरा, तब सियार निराश होकर चला गया! (सभी हँसने लगे) इन चापलूसों की ऐसी ही दशा है! (वही, पृ.३८८) **(क्रमशः)**

गीतातत्त्व-चिन्तन (११)

ग्यारहवाँ अध्याय

स्वामी आत्मानन्द

संयमित भोग द्वारा ईश्वरप्राप्ति

भगवान कहते हैं – **तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व** – इसीलिए अर्जुन तू उठ ! पहले अध्याय में आया था कि अर्जुन रथ के पिछले भाग में सिर पर हाथ रखकर शोकमग्न बैठा हुआ था। अर्जुन को वहीं से उठने के लिए भगवान कहते हैं। उनके तस्मात् कहने का अर्थ यह है कि ये सब तो तेरे न मारने पर भी बचेंगे नहीं। मैं काल बनकर आया हूँ। मैं तुझे इस काम में निमित्त बनने के लिए जो कह रहा हूँ, उसे सम्पन्न करके ही तुझे सफलता का यश प्राप्त होगा। इसीलिए शत्रु को जीतने का यश प्राप्त कर। लोग भले ही कहें कि अर्जुन ने शत्रुओं को जीता है, पर तेरे मन में यह बात नहीं रहनी चाहिए। तुझे तो यह स्मरण रखना चाहिए कि ये सब मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं और तू उसका निमित्त मात्र बन। यह ज्ञान तेरे अहंकार को बढ़ने नहीं देगा। इसीलिए तू उठ तो सही ! यश का तू उपभोग कर। शत्रुओं को जीत ले और यह जो समृद्धशाली राज्य तुझे प्राप्त होगा, उसका भोग कर। भोग करते हुए भी तेरे मन का भाव यही रहेगा कि यह सब भगवान का दिया हुआ है। जिसके पास सम्पत्ति हो, सत्ता हो और वह उनका भोग ईश्वर की कृपा मानकर करे, तो वस्तुत: लोकों का कल्याण करता है। उस

सत्ता के द्वारा उसका स्वयं का कल्याण होता है। यह भारतीय परम्परा है। हमने सत्ता को भी भगवान को पाने का साधन बनाया है। इसीलिए तो हम कहते हैं चार पुरुषार्थ हैं जीवन के। इन चार पुरुषार्थों में धर्म और मोक्ष तो हैं ही, अर्थ और काम भी पुरुषार्थ माने जाते हैं। अर्थ का मतलब केवल पैसा नहीं, अर्थ का तात्पर्य सत्ता से होता है। सत्ता भी पुरुषार्थ है। इसका तात्पर्य यह है कि सत्ता के सहारे, अर्थ के सहारे मनुष्य उस चरम लक्ष्य को प्राप्त करने में समर्थ होता है, यह भारत का तत्त्वज्ञान रहा है और भारत ने यह दिशा हमें दी है। भगवान कहते हैं – अर्जुन उठ ! शत्रुओं को जीत ले। लोग तेरी वाहवाही करेंगे, पर तू अपनी वाहवाही नहीं करना। इसी में तो आनन्द है कि मैं भगवान की वाहवाही करूँ। लोग मेरी वाहवाही करें।

स्वामी विवेकानन्द जब अमेरिका से लौटे, तो उन्होंने रामकृष्ण मिशन का अध्यक्ष पद स्वीकार नहीं किया। अपने गुरुभाई स्वामी ब्रह्मानन्द को उस पद पर आसीन कराया, जो श्रीरामकृष्ण देव के मानसपुत्र थे। एक बार जब ब्रह्मानन्दजी भुवनेश्वर गए हुए थे, तब एक बहुत बड़ा व्यापारी उनके पास आया और बहुत ही भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम करने लगा। उन्होंने हँसकर पूछा – इस शरीर को तुम इतना प्रणाम कर रहे हो, ऐसा करने से तुम्हें क्या सुख मिलता है? उसने कहा – महाराज ! आपने कितना बड़ा त्याग किया ! आप बड़े त्यागी महात्मा हैं। इसीलिए मैं आपको इस तरह प्रणाम कर रहा हूँ। यह सुनते ही ब्रह्मानन्दजी ने उस व्यापारी को साष्टांग दण्डवत प्रणाम किया, तो व्यापारी अचकचा गया। बोला – महाराज, अनर्थ हो गया ! यह कैसा पाप ! आप मुझे प्रणाम करते हैं ! तब स्वामीजी बोले, भई! मैं तो बड़े त्यागी को प्रणाम कर रहा हूँ। मैंने तो भगवान को पाने के लिए संसार छोड़ा। तुम यह जानते हो कि भगवान महान हैं और यह संसार तुच्छ। मैंने महान को पाने के लिए तुच्छ का त्याग किया, तो मेरा त्याग तो छोटा-सा है, पर तुमने संसार को पाने के लिए भगवान को छोड़ा। तुम्हारा त्याग बहुत बड़ा है। इसीलिए मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

भगवान ने अर्जुन को सव्यसाची कहकर सम्बोधित किया। अर्जुन को बाँए हाथ से भी बाण चलाने का अभ्यास था। दाहिने हाथ से जितनी कुशलता के साथ वह वाण चलाता था, वैसे ही बाँए हाथ से भी बाण चला सकता था। इसीलिए उसका नाम पड़ा सव्यसाची। दोनों हाथों से बाण चलानेवाला। भगवान ने अर्जुन को निमित्त मात्र बनने की बात कही, तो इतना बड़ा योद्धा केवल निमित्त बनने के ही योग्य था।

अर्जुन को भयभीत करनेवाले कौरव योद्धागण

द्रोणञ्च भीष्मञ्च जयद्रथञ्च
कर्णं तथाऽन्यानपि योधवीरान्।
मया हतास्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा
युज्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्।।३४।।

द्रोणम् च भीष्मम् च जयद्रथम् च कर्णम् (द्रोणाचार्य और भीष्मपितामह तथा जयद्रथ और कर्ण) तथा अन्यान् अपि हतान् योधवीरान् (तथा और भी अन्य मेरे द्वारा मारे हुए वीर योद्धाओं) त्वम् जहि मा व्यथिष्ठाः (को तू मार, भय मत कर) रणे सपत्नान् जेतासि युध्यस्व (युद्ध में वैरियों को अवश्य जीतेगा, युद्ध कर)।

''द्रोणाचार्य और भीष्मपितामह तथा जयद्रथ और कर्ण तथा और भी अन्य मेरे द्वारा मारे हुए वीर योद्धाओं को तू मार, भय मत कर, युद्ध में वैरियों को अवश्य जीतेगा, युद्ध कर।

इस श्लोक में भी वही भाव व्यक्त करते हैं। कहते हैं – द्रोण, भीष्म, जयद्रथ, कर्ण तथा अन्य पराक्रमी योद्धा सब जो मेरे द्वारा मारे जा चुके हैं, उन्हें ही तू भी मार। तू व्यथित मत हो, चिन्तित मत हो, भयभीत मत हो। तू बस युद्ध कर। रण में निस्सन्देह तू वैरियों को जीतेगा। भगवान ने ये चार नाम लिए, क्योंकि अर्जुन इन्हीं चारों से विशेष रूप से डरता था। आचार्य द्रोण, इतने बड़े धनुर्धर हैं ! उन्हीं से अर्जुन ने सारी शस्त्रविद्या सीखी। अर्जुन जानता था कि द्रोण महारथी हैं, महाधनुर्धारी हैं। मेरे गुरु हैं। अतएव द्रोण से भयभीत होने का कारण तो है ही। भीष्म साक्षात् पितामह हैं, जिन्होंने परशुराम को युद्ध में हरा दिया। परशुराम जैसे पराक्रमी वीर, जिन्होंने इक्कीस बार इस धरा को क्षत्रियों से रहित कर दिया था। भीष्म स्वेच्छामृत्यु सम्पन्न भी हैं। उनके पास दिव्य अस्त्र भी हैं। जबकि वे स्वेच्छामृत्यु से सम्पन्न हैं, तो भला कोई मनुष्य अपने बाणों से उन्हें मार ही कैसे सकेगा? इन दोनों से डरना तो ठीक है, पर प्रभु ने कर्ण का नाम भी क्यों लिया! कर्ण भी बहुत वीर था। वैसे भी कर्ण कुन्ती का ही पुत्र था और उसने परशुरामजी से शिक्षा प्राप्त की थी। अर्जुन के समकक्ष यदि कोई धनुर्धर था, तो वह कर्ण ही था। कर्ण से डरने का भी कारण हो सकता है। पर जयद्रथ का नाम क्यों? उसकी तो कोई हस्ती ही नहीं है। जयद्रथ तो कहीं जाता ही नहीं है। फिर भगवान ने उसका नाम क्यों लिया? इसका कारण यह बताते हैं कि वैसे तो जयद्रथ कोई बड़ा योद्धा नहीं था, पर जिस समय उसका जन्म हुआ, तब ऐसी आकाशवाणी हुई थी कि कोई महारथी ही इसका वध करने में समर्थ होगा। जयद्रथ के पिता तपस्या करने लगे और उस तपस्या के द्वारा उन्हें यह वरदान मिल गया कि जिस व्यक्ति द्वारा जयद्रथ का सिर पृथ्वी पर लोटने लगेगा, उस व्यक्ति के स्वयं के सिर के सौ टुकड़े हो जाएँगे। अब उससे डरने की बात तो हो ही गई, पर भगवान अर्जुन को बुद्धि देते हैं कि यह तो मेरे द्वारा मारा ही जा चुका है। महाभारत में कथा भी आती है कि भगवान ने अर्जुन को सिखाया कि जयद्रथ के सिर को इस तरह काटे कि वह जाकर संध्या-वन्दन करते उसके पिता के हाथों में ही गिरे। ऐसा ही हुआ भी। पिता ने न पहचानकर पुत्र का सिर पृथ्वी पर फेंक दिया और उनके ही सिर के सौ टुकड़े हो गए। यहाँ पर जयद्रथ का भी नाम लेने का कारण यही है कि वैसे तो वह सामान्य व्यक्ति है, पर पिता की तपस्या के कारण उसके भीतर एक अपूर्व शक्ति आ गई है। भगवान ने तो आश्वस्त कर ही दिया कि इन सबको तथा अन्य योद्धाओं को भी मैं पहले ही मार चुका हूँ। तू किसी प्रकार का भय न करके युद्ध कर और जीत तेरी ही होगी।

संजय उवाच

एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य
कृताञ्जलिर्वेपानः किरीटी।
नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णं
सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य।।३५।।

संजय उवाच (संजय बोला) केशवस्य एतत् वचनम् श्रुत्वा (भगवान के इस वचन को सुनकर) किरीटी (अर्जुन) कृताञ्जलिः भीतभीतः वेपमानः (हाथ जोड़कर भयभीत हो काँपते हुए) नमस्कृत्वा भूय एव प्रणम्य (बारम्बार प्रणाम करके) कृष्णम् सगद्गदम् आह (भगवान से गद्गद वाणी में कहा)।

''भगवान के इस वचन को सुनकर अर्जुन ने हाथ जोड़कर भयभीत हो काँपते हुए बारम्बार प्रणाम करके भगवान से गद्गद वाणी में कहा।''

अब संजय धृतराष्ट्र को बता रहे हैं कि भगवान केशव के ये वचन सुनकर दोनों हाथों से अञ्जलि बनाकर, अर्जुन ने काँपते हुए नमस्कार किया। फिर अत्यन्त भयभीत होकर प्रणाम करके भगवान श्रीकृष्ण से गद्गद वाणी में कहा –

(क्रमशः)

आप भला तो जग भला

स्वामी सत्यरूपानन्द

पूर्व सचिव, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर

हम कहीं भी रहें, हमारा मन भगवान की ओर रहना चाहिए। हमारे जीवन में इतने जन्मों के दूसरे जो संस्कार रहते हैं, वे बहुत प्रबल रहते हैं। हमें जप-ध्यान, साधना नहीं करने देते हैं। इसलिये जबरदस्ती जप करना चाहिए। लगातार जप का अभ्यास करने से वैसी आदत बन जाती है। आचार्यों ने बताया है – जपात् सिद्धि:। अत: हमें जप करने का अभ्यास करना चाहिये। नाम-स्मरण से संसार छूट जायेगा। लेकिन सबसे पहले हमारी इच्छा तो होनी चाहिए कि हमारा मन संसार से हट जाये। हमारा शरीर नया है, लेकिन मन तो पुराना है। भगवान की कृपा हुई तो इसी जन्म में हमें भगवान का साक्षात्कार हो जायेगा।

अगर हम कामनारहित हो जायेंगे, तो हमें भगवान का साक्षात्कार होगा ही। हमें कितनी भी सुविधायें मिल जायें, पर वे स्थायी नहीं हैं। चिरस्थायी तो भगवान का नाम ही है। इसलिए अपने आप में सन्तुष्ट रहकर भगवान का नाम लेते रहना चाहिए। हमलोगों के लिए तो नाम का ही सहारा है। भगवान ने हमें बुद्धि दी है, तो अच्छा विचार करना चाहिए। भवगान के नाम में तब तक रुचि नहीं आती, जब तक हम बन्धन में हैं। इसलिए भगवान से प्रार्थना करनी चाहिये कि प्रभु हमें बन्धनों से मुक्त कर दो।

संसार को बढ़ाना नहीं चाहिए। जहाँ श्रद्धा रहती है, वहाँ बुद्धि काम करती है। जहाँ प्रेम रहता है, वहाँ मन रहता है। धन से बहुत-सी चीजें मिल सकती हैं, लेकिन धन से प्रेम नहीं मिलता, कोई भी चीज बाँट के खाने से हृदय का विस्तार होता है। अकेले खाने से स्वार्थ-बुद्धि आती है। सबसे समान प्रेम तो ब्रह्मज्ञानी ही कर सकता है। सावधानी ये रखनी है कि किसी के प्रति घृणा न हो। साधक-साधिकाओं को सावधानी से मन को देखना चाहिए कि हमारे मन में क्या भाव आ रहे हैं। इसलिए महापुरुष बोलते हैं – मन पर दृष्टि रखो। मन ही बन्धन और मुक्ति का कारण है।

हमें इन्द्रियों को अपने अधीन रखने का प्रयत्न करना है। संतुलित जीवन व्यतीत करना है। संतुलित जीवन बिताना बहुत आवश्यक है। शरीर और मन की दासता से मुक्त होकर भगवान की ओर जाने का प्रयास करना है। जब तक यह जीवन है, अन्तिम श्वास तक ये सब करना है, तभी हम सफल होंगे, तभी हमें भगवान का साक्षात्कार होगा, अन्यथा यह मानव जीवन व्यर्थ ही चला जायेगा। हम बहुत दुखी होंगे। इसका परिणाम होगा – पुनरपि जननं पुनरपि मरणम्।

अभी किसी ने प्रश्न पूछा है कि हमें सबके साथ काम करना पड़ता है, इसके लिये लोगों से झगड़ा भी होता है, तो हमें कैसे रहना चाहिए कि काम भी हो और किसी से झगड़ा भी न हो?

देखो काम करने जाने पर कभी-कभी विवाद होता है, मतभेद हो जाता है। लेकिन उसे मन में रखकर शत्रुता नहीं मोल लेनी चाहिये। हिन्दी में एक कहावत है – आप भला, तो जग भला। अपना व्यवहार अच्छा रहा, तो सब अपने साथ अच्छा व्यवहार करते हैं। हर एक के अलग-अलग संस्कार रहते हैं। उस संस्कार के कारण उनका स्वभाव बनता है। जो जैसा है, वैसा है। हमें अपने को ठीक रखना है। हमारी उँगलियाँ भी एक जैसी नहीं होतीं। अनेक कर्मों के कारण हर एक का स्वभाव अलग-अलग रहता है। जुड़वा बहन-भाई भी रहे, तो वे एक स्वभाव के नहीं रहते हैं। जीवन में सुखी रहने के लिए अपने मन की ओर ध्यान देना है। किसी दूसरे की ओर हमें ध्यान न देकर अपनी ओर ध्यान देना है। यदि तुम्हारे मन में गड़बड़ है, तो तुम कहीं भी जाओ, तुमको गड़बड़ी ही दिखेगी। गृहस्थों के लिए आत्मरक्षा करनी जरुरी है। यदि कोई हमें बहुत कष्ट दे रहा है, तो हमें शक्ति के साथ उसका विरोध करना है। भगवान के पास उनके लिये प्रार्थना करनी है कि प्रभु उनकी दृष्टि बदल दो।

मन की दृष्टि बदलने से जगत भी चैतन्यमय दिखेगा, और आनन्द का सागर उमड़ पड़ेगा। मन को शुद्ध करने के लिये सतत नाम का अभ्यास करो। अभ्यास से मन भगवान में लगेगा और दुख का अन्त हो जायेगा। ○○○

साधुओं के पावन प्रसंग (४९)

स्वामी सत्यस्वरूपानन्द

स्वामी चेतनानन्द

(स्वामी चेतनानन्द जी महाराज से रामकृष्ण संघ के भक्त भलीभाँति परिचित हैं। वर्तमान में महाराज वेदान्त सोसायटी, सेंट लुइस के मिनिस्टर-इन-चार्ज हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द और वेदान्त पर अनेक पुस्तकें लिखी और अनुवाद की हैं। प्रस्तुत पुस्तक में रामकृष्ण संघ के महान त्यागी संन्यासियों के संस्मरण हैं, जिनके सम्पर्क में लेखक स्वयं आए थे। 'विवेक ज्योति' के पाठकों हेतु मूल बंगला से इसका हिन्दी अनुवाद धारावाहिक रूप से दिया जा रहा है। – सं.)

१९७० ई. में मायावती जाने के समय अलमोड़ा में कई दिन था। उस समय स्वामी सत्यस्वरूपानन्द (विशेष महाराज) के साथ परिचय हुआ। उनके साथ प्रतिदिन सन्ध्या समय घूमने जाया करता था तथा एक दिन बोसी सेन के घर भी गया था। बोसी बाबू ने राजा महाराज की यह घटना मुझे बतायी।

उन्होंने एक दिन राजा महाराज से कहा, ''महाराज, आप कृपण हैं।'' महाराज ने प्रश्न किया, ''क्यों कृपण कहा?'' बोसी बाबू ने उत्तर दिया, ''जिसके पास बहुत धन होता है, किन्तु वह किसी को नहीं देता, इसीलिए उसको कृपण कहा जाता है। आप इच्छा करने से दूसरों को ईश्वर दर्शन करा दे सकते हैं, किन्तु वह नहीं करा रहे हैं, इसीलिए आप कृपण हैं।'' महाराज यह सुनते ही गम्भीर हो गये और उत्तर दिया, ''कौन चाहता है? यहाँ तक कि साधु-ब्रह्मचारी भी आकर कहते हैं, 'महाराज, दीक्षा दीजिए, ब्रह्मचर्य दीजिए, संन्यास दीजिए।' परन्तु कोई नहीं कहता कि ईश्वर-दर्शन करवा दीजिए।''

स्वामी सत्यस्वरूपानन्द

विशेष महाराज बीच-बीच में मायावती आया करते थे। वे विविध प्रकार का व्यंजन तथा मिठाई बनाते थे। विशेष महाराज श्रीमाँ के शिष्य थे। परवर्तीकाल में वे अद्वैत आश्रम, काशी में निवास करते थे।

एक दिन सन्ध्या को विशेष महाराज के साथ अलमोड़ा के मार्ग पर घूम रहा था। अन्य सम्प्रदाय के एक परिचित संन्यासी ने विशेष महाराज से वार्तालाप करते हुए कहा, ''**देहाकारावृत्तिः मृत्युः** अर्थात् दैहिक विषय का चिन्तन करना ही मृत्यु है।'' सत्य में ही, शरीर की ही मृत्यु होती है, आत्मा अविनाशी है। उन संन्यासी की वे बातें मेरे मन में अभी भी गूँज रही हैं।

१९८६ ई. में अमेरिका से वापस भारत में आकर कई दिन काशी में था। उसी समय कई पुराने संन्यासियों का साक्षात्कार लिया और उनकी बातें कैसेट में रिकॉर्ड करके रखा। उन कैसेटों से ही यह सभी स्मृतिकथा लिखना हुआ। १९/१०/१९८६ एवं २६/१०/१९८६ को स्वामी सत्यस्वरूपानन्द महाराज का अद्वैत आश्रम, काशी में प्रश्न करके उनकी स्मृतिकथा रिकॉर्ड किया।

मैं – महाराज, आप श्रीमाँ के शिष्य हैं। उनकी स्मृति कुछ कहिए।

महाराज ने कहा – ''सिलेट में हमलोगों का एक समूह था। वहाँ पर ठाकुर-श्रीमाँ-स्वामीजी के विषय में चर्चा होती थी। मेरी उस समय उम्र १९ वर्ष थी। मैं वहाँ पर ठाकुर-श्रीमाँ के विषय में जान पाया। प्रेमेश महाराज (स्वामी प्रेमेशानन्द), योगेश महाराज (स्वामी अशोकानन्द) आदि संन्यासी बहुत प्रेरित करते थे। स्वामी प्रबुद्धानन्द ने १९१७ ई. में श्रीमाँ से दीक्षा प्राप्त की और संन्यासी होने के लिए प्रयत्न किया। उनके पिताजी उनको जयरामवाटी से पकड़ कर ले आये। श्रीमाँ ने उनको कहा, 'बेटा, तुम्हारा अष्टम् कष्टम् सब समाप्त हो जायेगा।' उनसे श्रीमाँ की बातें सुनकर मैंने श्रीमाँ को पत्र लिखा। उन्होंने मुझे अपने पास आने के लिए अनुमति दी। मेरे पास कुछ भी रुपया-पैसा

नहीं था। मैंने स्वामी अशोकानन्द को (वे उस समय संन्यासी नहीं हुए थे) कहा, ''मेरे पास पैसा नहीं है। श्रीमाँ के पास जाऊँगा।'' वे विद्यालय में शिक्षक थे। उन्होंने श्रीमाँ के एक शिष्य केशव बाबू को बुलाया, उस व्यक्ति ने मुझे बीस रुपये दिये। प्रबुद्ध महाराज ने कोलकाता में एक भक्त को मेरे रहने हेतु एक पत्र दिया था। मेरे कोलकाता पहुँचने पर उन्होंने एक होटल में रहने की व्यवस्था कर दी और उसके अगले दिन हावड़ा स्टेशन ले गये। वहाँ पर बाँकुड़ा जाने वाले एक युवक के साथ परिचय हुआ। वह भी विष्णुपुर जायेगा। हम दोनों टिकट कटाकर ट्रेन में बैठ गये। रात्रि के अन्तिम पहर में ट्रेन विष्णुपुर स्टेशन पर पहुँची। ट्रेन से उतरने पर सुना, एक व्यक्ति बोल रहा है कोतुलपुर जायेंगे? मैंने कहा, 'जाऊँगा।' तीन रुपया देकर बैलगाड़ी को भाड़ा पर लिया गया। जयपुर पहुँचने पर कुछ खाया। कुछ दूर जाने पर गाड़ी का एक पहिया टूट गया। गाड़ीवान ने कहा, ''आप लोग बैठिए। मैं गाँव से बाँस लाकर गाड़ी को ठीक करूँगा। वह चला गया, वापस नहीं आया। मैंने देखा कि सन्ध्या होने वाली है। दूसरे व्यक्ति को आधा भाड़ा देकर मैं पैदल चलना प्रारम्भ कर दिया। तत्पश्चात् कोतुलपुर पहुँचकर मैंने कोआलपाड़ा का मार्ग जान लिया और सूर्यास्त के समय वहाँ पहुँच गया। आश्रम के संन्यासियों ने कहा, 'आज तो श्रीमाँ का दर्शन नहीं होगा। कल दर्शन होगा।'

''अगले दिन स्नान करके श्रीमाँ का दर्शन करने के लिए तैयार हुआ। उस दिन तारकेश्वरानन्द घर से भाग कर कोआलपाड़ा में आये थे। स्वामी विद्यानन्द हम दोनों को जगदम्बा आश्रम में श्रीमाँ के पास ले गये। आसन्नप्रसवा राधू को लेकर श्रीमाँ वहाँ पर निवास कर रही थीं। विद्यानन्द ने श्रीमाँ से हमारा परिचय कराते हुए कहा, ''माँ, ये दोनों आपका दर्शन करने आये हैं।' श्रीमाँ घर से बाहर निकलकर बरामदे में हमारे पास आकर बैठीं। उनके सिर पर घूँघट नहीं था। हम दोनों की उम्र बहुत कम थी। उन्होंने मुझसे पूछा, 'कहाँ से आ रहे हो?' 'सिलेट से।' 'सुरेन (सत्संगानन्द) कैसा है? इन्द्रदयाल (प्रेमेशानन्द) कैसा है?' उन्होंने इस प्रकार सिलट के भक्तों का हाल-समाचार पूछा। उन्होंने तारकेश्वरानन्द से कुछ नहीं पूछा।

''स्वामी विद्यानन्द ने कहा, ''माँ अभी स्नान करने जायेंगी। तुमलोग चलो।' हमलोग आश्रम में वापस आ गये। तब स्वामी केशवानन्द ने पूछा, ''तुमलोगों ने श्रीमाँ से दीक्षा के विषय में कहा?' 'नहीं, कुछ नहीं कहा।' 'ओह, कहना पड़ता है। नहीं कहने से क्या होगा?' तत्पश्चात् उन्होंने ध्रुवानन्द को कहा, ''इनलोगों को पुनः श्रीमाँ के पास ले जाओ और श्रीमाँ से कहना, ये लोग दीक्षाप्रार्थी हैं।' श्रीमाँ उस समय स्नान करने के लिए जा रही थीं। ध्रुवानन्द से सुनकर श्रीमाँ ने कहा, ''कल इनलोगों को स्नान करके आने के लिए कहना।'

''उसके अगले दिन बाँकुड़ा से चार दीक्षार्थी आये। जुलाई, १९१९ ई.। श्रीमाँ ने हमलोगों को एक-एक करके दीक्षा दीं। श्रीमाँ की आवाज बहुत मधुर थी। दीक्षा के समय ठाकुर-मन्दिर से वे बुलाती थीं, 'आओ, बेटा।' उनकी वह मधुमय कण्ठस्वर कभी भूलने का नहीं। उनके नेत्रों से स्नेह और करुणा झरती रहती थी। दीक्षा के पूर्व श्रीमाँ पूछती थीं, 'तुम्हारा वंश शाक्त है या वैष्णव।' सुना कि किसी को ठाकुर का मन्त्र भी प्रदान किया था। दीक्षा के समय वे इष्ट और गुरु निर्दिष्ट कर देती थीं। श्रीमाँ स्वयं को गुरु नहीं बताती थीं, ठाकुर को ही गुरु कहकर निर्देश करती थीं और कभी-कभी किसी को कहती थीं, 'मुझे पुकारना।' जैसा कि कटक के वैकुण्ठ को कहा था। लक्ष्मी दीदी ने यह सुनकर कहा, 'माँ तुमने क्या कहा?' 'कुछ भी तो नहीं।' यह कहकर श्रीमाँ ने बात टाल दी। लक्ष्मी दीदी ने वैकुण्ठ से कहा, 'तुम श्रीमाँ को पुकारना।'

''श्रीमाँ लिखना-पढ़ना नहीं जानती थीं, किन्तु उनका लोक-व्यवहार अद्भुत था। वे लड़ाई-झगड़ा पसन्द नहीं करती थीं। कोआलपाड़ा में श्रीमाँ के चरण-चिन्ह को लेकर केशवानन्द की माँ के साथ अन्य महिलाओं का झगड़ा हुआ। श्रीमाँ ने कहा, 'तुमलोग क्यों झगड़ा कर रही हो। मैं तो अभी भी जीवित हूँ। जितना चरण-चिन्ह लेना है, ले लो न।'

''दीक्षा के सम्बन्ध में श्रीमाँ का कोई आचार-अनुष्ठान नहीं था। वे पहले ठाकुर की पूजा करके बाद में दीक्षा देती थीं। एक-एक करके दीक्षा देती थीं। सबको एक साथ दीक्षा नहीं देती थीं। श्रीमाँ हमलोगों की तरह आनुष्ठानिक पूजा नहीं करती थीं। जैसा कि मनुष्य अपने सगे-व्यक्ति का आदर-सत्कार करता है, श्रीमाँ ठीक उसी प्रकार ठाकुर की पूजा करती थीं। ठाकुर के चित्र को चन्दन का तिलक, फूल, माला देकर सजाती थीं। तत्पश्चात् जप-ध्यान करके नैवेद्य देती थीं।

जयरामवाटी और कोआलपाड़ा में रसोईघर में आसन लगाकर थाली में अन्नभोग सजाकर निवेदन करती थीं।

''श्रीमाँ दीक्षार्थियों को प्रातःसन्ध्या नित्य जप-ध्यान करने को कहती थीं। श्रीमाँ अँगुली पर ही कर-जप करके दिखाती और १०८ बार जप करने के लिए कहती थीं। किसी के द्वारा माला चाहने पर वे माला का शोधन कर देती थीं। कोई यदि श्रीमाँ के ऊपर ध्यान करना चाहता, तो वे 'ना' नहीं कहती थीं। एक बार कोलकाता के एक भक्त ने श्रीमाँ से शक्ति-मन्त्र माँगा। श्रीमाँ ने कहा, ''बेटा, मैं देख रही हूँ कि तुम्हारा वंश राम का उपासक है। तुमको राम-मन्त्र ही दूँगी।' दीक्षा के उपरान्त वह घर जाने पर यह जान पाया कि उसका वंश राम का उपासक है। श्रीमाँ ने ठीक मन्त्र ही दिया है।

''जो भी हो, इस समय मैं कोआलपाड़ा में श्रीमाँ के पास सात-आठ दिन था। श्रीमाँ ने एक दिन कहा, 'बेटा, राधू के लिए सूप बना पाओगे?' मैंने कहा, 'हाँ माँ, बना सकूँगा। फिर भी मुझे थोड़ा-सा दिखा देना होगा।' श्रीमाँ ने कहा, 'सब्जी को छोटा-छोटा टुकड़ा करके, घी की छौंक देकर, तदुपरान्त थोड़ा-सा मसाला देकर जल में उबालना। वह सूप कटोरा में करके ले आना।' तृतीय दिन आश्रम से गरम कटोरा हाथ में लेकर जगदम्बा आश्रम में जा रहा हूँ। किन्तु गरम सहन न कर सकने के कारण मेरे हाथ से कटोरा रास्ते में ही गिर गया। भय से उदिग्न होकर मैंने स्वामी केशवानन्द को सब बताया। उन्होंने कहा, 'क्या किया? क्या किया? श्रीमाँ क्या सोचेंगी ! जो भी हुआ, तुम अभी श्रीमाँ के पास जाकर सब बताओ।' मुझे तो साहस ही नहीं हो रहा था। फिर भी, डर-डर के श्रीमाँ के पास जाकर कहा, 'माँ, गरम सूप का कटोरा मेरे हाथ से गिर गया।' श्रीमाँ ने कहा, 'ओह ! पकड़ना नहीं सीखा। पकड़ना नहीं सीखा। सावधानी से आना होता है।' मैंने कहा, 'माँ, यदि आप कहेंगी, तो पुनः सूप बनाकर ले आता हूँ।' तब श्रीमाँ ने कहा, 'आज और आवश्यकता नहीं।' उसके अगले दिन श्रीमाँ ने आश्रम में सन्देश भेजा कि, 'वह लड़का सूप तैयार करे, किन्तु कोई दूसरा उसे ले आये।'

''कोआलपाड़ा आश्रम में सात-आठ दिन रहने के उपरान्त श्रीमाँ ने मुझसे कहा, 'तुम मठ में राखाल तथा शरत के पास जाओ। वे लोग तुमको जहाँ भेजेंगे, तुम वहीं रहना।' तदुपरान्त मैं सीधे उद्बोधन गया और शरत महाराज का दर्शन किया। उन्होंने मुझसे पूछा, 'कहाँ से आ रहे हो?' मैंने कहा, 'मैं कोआलपाड़ा, श्रीमाँ के पास से आ रहा हूँ। श्रीमाँ ने आपके पास भेजा है। मैं संसार-त्याग करके आया हूँ। आपलोग जहाँ भेजेंगे, वहाँ जाऊँगा।' उन्होंने मुझे उद्बोधन में भोजन करके विश्राम करने के लिए कहा। तदुपरान्त सन्ध्या समय बलराम मन्दिर में राजा महाराज के पास भेज दिया। श्रीमाँ ने जो कहा था, मैंने महाराज को वह बताया। उन्होंने सुनकर कहा, 'तुम अभी काशी में जाओ। तदुपरान्त तुमको वृन्दावन या इलाहाबाद भेजा जायेगा।' महाराज के साथ मात्र इतनी ही बातें हुई थीं।

''श्रीमाँ के सम्बन्ध में दो घटनाएँ मैंने अशोक महाराज और रासबिहारी महाराज से सुनी थीं।

''भुवनेश्वर मन्दिर के प्रतिष्ठा और गृहप्रवेश के उपरान्त राजा महाराज वहीं पर थे। उन्हीं दिनों मैमनसिंह के एक सब-जज और उनकी स्त्री ने कुलगुरु से दीक्षा प्राप्त की। दीक्षा के उपरान्त उनके मन में बहुत अशान्ति होने लगी। मित्रों ने बताया, 'भगवान का नाम लो, सब ठीक हो जायेगा।' किन्तु अशान्ति केवल बढ़ती ही गयी। तब वे छुट्टी लेकर सपत्नी तीर्थ करने के लिए गये। काशी, वृन्दावन इत्यादि स्थानों में संन्यासियों से पूछने पर उनलोगों ने कहा, 'भगवान का नाम करो, उसी से शान्ति मिलेगी।' तदुपरान्त वे लोग दक्षिण भारत में रामेश्वर तीर्थ करके पुरी में जगन्नाथ दर्शन करके भुवनेश्वर में आये। पाण्डा उनको रामकृष्ण मठ में लेकर आये और वे लोग राजा महाराज का दर्शन करने के इच्छुक हुए। उन्होंने उनको प्रतीक्षा करने के लिए कहा।

''तदनन्तर महाराज ने सब-जज की सब बात सुनकर कहा, ''मुझे लगता है कि आपलोगों के मन्त्र में त्रुटि है।' उस सज्जन ने महाराज के चरणों में गिरकर कहा, 'यह बात तो किसी ने नहीं बताया। आप कृपा करके मन्त्र में संशोधन करके हमलोगों को बचाइये।' महाराज ने कहा, 'मैं नहीं कर पाऊँगा। आपलोग श्रीमाँ के पास जाइये। वे सब ठीक कर देंगी।' वे लोग श्रीमाँ के जयरायवाटी का पता और पथ-निर्देश लेकर वहाँ पर उपस्थित हुए। श्रीमाँ ने सब सुनकर कहा, 'देखो, मन्त्र में त्रुटि होने पर इष्ट के बदले अनिष्ट हो सकता है। इसीलिए तुमलोग मन में शान्ति नहीं पा रहे हो, मैं ठीक कर देती हूँ।' श्रीमाँ ने जैसे ही उनलोगों का मन्त्र संशोधन कर दिया, उनलोगों का मन आनन्द से भर गया।

उनलोगों के चेहरे का भाव बदल गया। तत्पश्चात् वे लोग पुनः महाराज का दर्शन करने के लिए आये थे और कई दिन भुवनेश्वर में रहकर अपने देश चले गये।

''श्रीमाँ की यह घटना किसी पुस्तक में लिखी हुई नहीं है। अशोक महाराज ने मुझे बताया था। श्रीमाँ उस समय उद्बोधन में थीं। शरत महाराज ने एक दिन रासबिहारी महाराज से कहा, ''देखो, श्रीमाँ जयरामवाटी जायेंगी। तुम और अशोक श्रीमाँ का सामान सजाकर बाँध लो।' शरत महाराज ने श्रीमाँ हेतु एक सुन्दर कीमती मच्छरदानी खरीदी, जिसे श्रीमाँ जयरामवाटी में उपयोग करेंगी। श्रीमाँ के वे दो सेवक उनके सभी सामान बाँध लिये तथा मच्छरदानी को एक ट्रंक में रख दिया।

''श्रीमाँ और उनके संगी सन्ध्या समय हावड़ा जाकर ट्रेन पकड़े और रात्रि के अन्तिम पहर में विष्णुपुर स्टेशन पहुँच गये। तदुपरान्त बैलगाड़ी करके सन्ध्या के पहले जयरामवाटी पहुँचे। श्रीमाँ का सामान और ट्रंक उनके घर में रखकर वे लोग बैठकखाना में चले गये। श्रीमाँ धीरे-धीरे अपना सामान ठीक करने लगीं और ट्रंक से कपड़ा-वपड़ा निकालने लगीं। इसी बीच काली मामा खबर सुनकर श्रीमाँ को देखने आये। खुले ट्रंक में नवीन झकझक मच्छरदानी देकर काली मामा ने कहा, ''दीदी, यह मच्छरदानी मुझे देनी ही होगी।' यह कहकर वे मच्छरदानी को अपने बगल में दबाकर अपने घर की ओर चल दिये। श्रीमाँ निर्वाक होकर खड़े-खड़े देखती रह गयीं।

''तत्पश्चात् सन्ध्यारती के बाद अशोक महाराज और रासबिहारी महाराज श्रीमाँ का बिछौना ठीक करके मच्छरदानी लगाने के लिए आये। श्रीमाँ चुपचाप खड़ी थीं। उनके ट्रंक में मच्छरदानी न देखकर कपड़ा-वपड़ा उलट-पलट करके देखा, किन्तु नयी मच्छरदानी नहीं देख पाये। वे लोग बार-बार श्रीमाँ से पूछ रहे हैं, किन्तु श्रीमाँ कोई उत्तर न देकर चुपचाप खड़ी हैं। तदनन्तर सेवकों द्वारा उत्तर देने के लिए दबाव देने पर श्रीमाँ ने कहा, ''बेटा, काली माँग रहा था, इसीलिए उसको दे दिया।' रासबिहारी महाराज ने कहा, 'माँ शरत महाराज ने आपके उपयोग के लिए दिया था। आपने एक दिन भी उपयोग नहीं किया। महाराज क्या सोचेंगे !' श्रीमाँ ने कहा, 'बेटा, शरत और क्या सोचेगा। तुमलोग वही पुरानी मच्छरदानी लगा दो।' सेवक निरुपाय होकर श्रीमाँ की पुरानी मच्छरदानी लगा कर घर से बाहर निकल गये, तभी उनलोगों ने देखा कि काली मामा आँगन से होकर पुनः श्रीमाँ के पास जा रहे हैं। तब दोनों सेवकों ने काली मामा का दोनों हाथ पकड़कर पूछा, 'मामा, श्रीमाँ की मच्छरदानी कहाँ है?' 'दीदी मुझको दी हैं।' 'दीदी ने आपको नहीं दिया है। आपने स्वयं लिया है। आपको मच्छरदानी वापस करना ही होगा।' तब काली मामा ने चीत्कार करते हुए कहा, 'ओ दीदी, तुम्हारे सेवकों ने मुझे मार डाला !' चीत्कार सुनकर श्रीमाँ जल्दी से कमरे के भीतर से निकलकर बाहर आयीं। तब काली मामा अपना हाथ छुड़ाकर अपने घर की ओर दौड़े। सेवक भी उनके पीछे-पीछे दौड़े। श्रीमाँ ने उनको बुलाते हुए कहा, 'तुमलोग साधु हो। चले आओ। उसके पीछे मत जाओ।' काली मामा इसी बीच घर में जाकर दरवाजा बन्द कर दिये। श्रीमाँ ने सेवकों को थोड़ा-सा फटकार करते हुए कहा, 'तुमलोग संन्यासी हो, त्याग-वैराग्य लेकर रहना। सामान्य मच्छरदानी के लिए झगड़ा करना ठीक नहीं।' सत्य में, श्रीमाँ त्याग और सहनशीलता का उदाहरण प्रस्तुत कर गयी हैं।

''सत्य में आश्चर्य होता है कि श्रीमाँ अपने आत्मीयजनों को कैसे माया-मोह द्वारा ढक कर रखी थीं, जिससे वे लोग उनको पहचान नहीं पाये। वे लोग देखते कि कितने गणमान्य लोग श्रीमाँ के पास आ रहे हैं, दीक्षा ले रहे हैं, पूजा कर रहे हैं, किन्तु वे लोग श्रीमाँ का स्वरूप पहचान नहीं पाते थे। श्रीमाँ उनको रुपया, यह-वह देकर भुलाकर रखती थीं। काली मामा ही श्रीमाँ के पास अधिक उत्पात करते थे। अन्त में प्रसन्न मामा भी श्रीमाँ के पास अनेक प्रकार की सहायता के लिए दबाव देते थे।

मैं – श्रीमाँ को देखकर आपके मन में क्या विचार आया था ?

महाराज – मैं तो उस समय बच्चा था। श्रीमाँ को देखकर घर के माँ जैसा ही अनुभव होता था। फिर भी, लोगों के मुँह से सुनता था कि श्रीमाँ साक्षात् जगदम्बा हैं।

मैं – श्रीमाँ की कोई विशेषता आपको स्मरण आ रही है?

महाराज ने कहा, ''हाँ, श्रीमाँ कभी भी किसी के मन को कष्ट देकर कोई बात नहीं बोल पाती थीं। गोलाप-माँ स्पष्ट वक्ता थी। वे उच्चे आवाज में सीधे-सीधे कह देती थीं, जिससे कइयों के मन में कष्ट होता था। परन्तु श्रीमाँ इस प्रकार सुन्दर सजा करके बातें कहती थीं कि जिससे दूसरे

के हृदय को चोट न पहुँचे। जिस प्रकार किसी को बाजार करने के लिए पैसा दिया किन्तु उसने बाकी पैसा वापस नहीं किया। श्रीमाँ उसको कहतीं, 'बेटा, तुमको बाजार करने हेतु पैसा दिया था, तुमको और पैसे की आवश्यकता है?' वह व्यक्ति लज्जित होकर कहता, 'नहीं, माँ। मैं आपको बाकी पैसा देना भूल गया।' वह तब बाकी पैसा वापस कर देता था।

''वे दूसरों के दुख-कष्ट को सहन नहीं कर पाती थीं। स्वयं बहुत कष्ट होने पर भी श्रीमाँ सब सहन करती थीं। एक बार नवासन की बहू (मन्दाकिनी राय) को निमोनिया हुआ। वह श्रीमाँ के घर में जमीन पर बिछौना बिछायी। घर में दुर्गन्ध थी। किशोरी महाराज ने श्रीमाँ की असुविधा को देखकर उसको जबरदस्ती करके पालकी में कोयालपाड़ा ले जाकर चिकित्सा की व्यवस्था की। श्रीमाँ ने किशोरी महाराज को कई बार मन्दा को हटाने के लिए मना किया था, क्योंकि उसने श्रीमाँ की सेवा की थीं और श्रीमाँ का आश्रय ग्रहण किया था। उसके मन में कष्ट होगा, ऐसा सोचकर श्रीमाँ ने सभी असुविधा सहन की थी। अन्त में मन्दा ठीक होकर जयरामवाटी वापस आयी।

''बेलूड़ मठ की पुरानी बातें स्वामीजी के शिष्य कानाई महाराज (स्वामी निर्भयानन्द जी) से सुनी थी। वे स्वामीजी के सेवक थे।

''एक ग्वाला बेलूड़ मठ में प्रतिदिन दूध देता था। एक दिन दूध देकर वह मठ के गेट के बाहर बैठकर शराब पिया और अनाप-सनाब बक रहा था। स्वामाजी ने यह सुनकर ग्वाले को बुलाया। तत्पश्चात् उन्होंने उससे पूछा, 'बेटा, तुम दूध में पानी क्यों मिलाते हो?' शराब की अवस्था में ही उसने उत्तर दिया, 'हाँ, उसमें पानी मिलाता हूँ। मेरे बाप-दादा गड़ा-गुड़ी से पानी मिलाते थे। किन्तु मैं चपाकल का पानी मिलाता हूँ।' मतवाला ग्वाला की सत्य बातें सुनकर स्वामीजी बहुत आनन्दित हुए। स्वामीजी सत्य के पुजारी थे।

''स्वामीजी जब द्वितीय बार अमेरिका गये; तब शरत महाराज के ऊपर बेलूड़ मठ के कार्य की देखरेख की जिम्मेदारी देकर गये। वे मठ को बहुत फिट-फाट रखने का प्रयत्न करते थे। मठ में सुशील महाराज (स्वामी प्रकाशानन्द) भण्डारी थे। शरत महाराज एक दिन भण्डार का निरीक्षण करने गये और देखा कि फर्श पर कुछ घी गिरा हुआ है। शरत महाराज ने पूछा, 'सुशील, फर्श पर घी कैसे गिरा?' 'ऐसा लगता है कि पोलाव के भीतर से गिरा है।' शरत महाराज ने हँसकर कहा, 'पोलाव नहीं, सोइते के अन्दर से गिरा है।' 'तो मेरी ही भूल है', सुशील महाराज ने उत्तर दिया।

''और एक बार मठ का कच्चा पायखाना चार-पाँच दिन तक साफ नहीं हुआ। मेहतर नहीं आ रहा था। बहुत खराब स्थिति है। कोई भी सफाई नहीं कर रहा है। तत्पश्चात् एक दिन दोपहर के समय जब सभी सोने के लिए गये, तब स्वामी बोधानन्द तथा एक दूसरे संन्यासी ने पायखाना सफाई करके गंगास्नान किया और साबुन लगाकर पूरा शरीर साफ किया। इस ओर बाबूराम महाराज बहुत आचारी थे। उन्होंने सब सुनकर बोधानन्द और संन्यासी से कहा, 'तुम दोनों ने पायखाना साफ किया है। तुम ठाकुर-मन्दिर में नहीं जा पाओगे।' सन्ध्या समय शरत महाराज ने घोषणा की, 'इन दोनों संन्यासियों ने बहुत बड़ा कार्य किया है, इनके सम्मानार्थ आज रात्रि को लुची, तरकारी और मिठाई का भण्डारा होगा। सब खर्चा मैं दूँगा।' रात्रि में बहुत आनन्द से संन्यासियों ने भण्डारा खाया। बाबूराम महाराज ने और कुछ नहीं कहा।

''कानाई महाराज बहुत चंचल स्वभाव के थे। उनके भीतर डर-भय नहीं था। संन्यासियों को कुछ भी नहीं समझते थे, फिर भी महापुरुष महाराज से कुछ डरते थे। उन दिनों मठ में आगंतुक कक्ष में धुम्रपान करने की व्यवस्था थी। एक दिन सन्ध्या के पश्चात् महापुरुष महाराज अँधेरे में बैठकर हुक्का से तम्बाकु पी रहे थे। कानाई महाराज ने कमरे के भीतर जाकर सोचा कि सुधीर महाराज (स्वामी शुद्धानन्द) तम्बाकु पी रहे है। कानाई महाराज ने कहा, 'भाई सुधीर, हुक्का दो, थोड़ा-सा तम्बाकु पीऊँ।' कोई उत्तर नहीं मिला। पुनः कहा, 'दो भाई हुक्का।' फिर भी उत्तर नहीं मिलने पर उन्होंने हुक्का को पकड़कर कहा, 'दे रे साला।' उसी प्रकार महापुरुष महाराज ने कहा, 'ले रे साला।' जैसे ही महापुरुष महाराज की आवाज सुनी, कानाई महाराज दौड़कर कमरे से भाग गये।''

रामकृष्ण संघ के संन्यासियों की रसप्रियता देखकर हँसी आती है और यह अनुभव करा देता है कि श्रीरामकृष्ण द्वारा प्रदर्शित अध्यात्म-जीवन शुष्क और नीरस नहीं है। **(क्रमशः)**

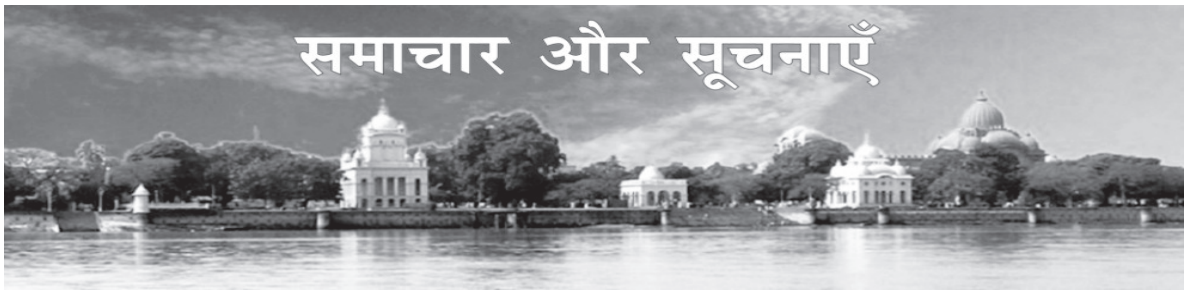

हरियाणा के गुरुग्राम में रामकृष्ण मिशन इंस्टीट्यूट ऑफ वैल्यूज' का उद्घाटन

२ नवम्बर, २०२२ पावन जगद्धात्री पूजा के दिन रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन के वरिष्ठ उपाध्यक्ष और रामकृष्ण मठ चेन्नई के अध्यक्ष पूज्यपाद स्वामी गौतमानन्द जी महाराज ने हरियाणा के गुरुग्राम में रामकृष्ण मिशन का पहला केन्द्र

'रामकृष्ण मिशन इंस्टीट्यूट ऑफ वैल्यूज' का उद्घाटन किया गया । इस उपलक्ष्य में वहाँ १ नवम्बर से ३ नवम्बर, २०२२ तक त्रिदिवसीय कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसमें १५०० भक्तों और १५० साधुओं ने भाग लिया। १ नवम्बर को आयोजित सार्वजनिक सभा के मुख्य अतिथि रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के महासचिव श्रद्धेय स्वामी सुवीरानन्द जी महाराज थे। उन्होंने 'रामकृष्ण मिशन की १२५ वर्ष की सेवा-गाथा' पर सारगर्भित व्याख्यान दिया। २ नवम्बर के अपराह्न में हरियाणा के मुख्यमन्त्री सम्माननीय मनोहर लाल खट्टर ने ओडिटोरियम का उद्घाटन किया। उस दिन की सार्वजनिक सभा के वे मुख्य अतिथि थे। उन्होंने 'स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा' पर व्याख्यान दिया। ३ नवम्बर की सार्वजनिक सभा का विषय था – 'शिक्षा के द्वारा आदर्श का जागरण'। इस विषय पर संन्यासियों और इस विषय में दक्ष श्री वी. श्रीनिवास जी ने व्याख्यान दिये। अपराह्न में दूसरी सभा थी, जिसका विषय था – 'श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा और स्वामी विवेकानन्द के अनुसार साधना'। इस विषय पर रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के सह-महासचिव स्वामी बलभद्रानन्द जी और अन्य संन्यासियों ने व्याख्यान दिये।

विभिन्न केन्द्रों द्वारा आदर्शोन्मुखी शिक्षा और युवा-शिविर आयोजित किये गये

रामकृष्ण मिशन, बेलगावी द्वारा २३ से २५ सितम्बर, २०२२ तक आवासीय शिक्षक कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें सरकारी स्कूलों के ४० शिक्षकों ने भाग लिया। १८ अक्तूबर, २०२२ को युवा शिविर का आयोजित हुआ, जिसमें ८०० युवक उपस्थित थे। ३० अक्तूबर, २०२२ को अर्द्धदिवसीय अभिभावक कार्यशाला आयोजित हुई, जिसमें ५०० अभिभावकों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मिशन, दिल्ली ने २७ अक्तूबर से २६ नवम्बर तक आदर्श शिक्षा पर २० ऑफलाइन और ३ ऑनलाइन कार्यशालाएँ आयोजित कीं, जिसमें भारत के विभिन्न भागों से १११४ स्कूल-शिक्षकों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर द्वारा आदिवासी क्षेत्रों में कम्बल वितरण किया गया

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर द्वारा २० नवम्बर, २०२३ को गरियाबन्द जिले के छुरा ब्लाक के ६ गाँवों – राजपुर, सिवनी, कन्टाखुसरी, छत्तरपुर, भुँजियापारा और गानबोरा के २०८ अभाग्रस्त परिवारों में २०८ उत्कृष्ट कम्बल वितरित किये गये।